

हरे कृष्ण

कालजयी पुस्तकें

सार्थक जीवन के लिए

कृष्णभावनामृत के विज्ञान पर चौंतीस पुस्तकें— प्रत्येक में क्या है, चार छोटे अनुच्छेदों में।





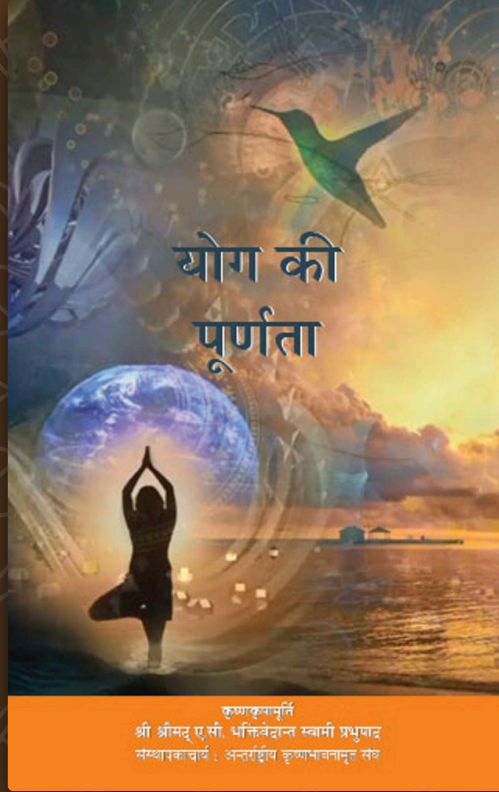
कृष्णकृपाश्रीमूर्ति श्री श्रीमद ए.सी. भक्तिवेदान्त स्वामी प्रभुपाद

आगे के पृष्ठ कृष्णभावनामृत के विज्ञान पर चौतीस पुस्तकों का परिचय देते हैं। प्रत्येक पुस्तक के लिए आमने-सामने दो पृष्ठ हैं: बाईं ओर उसका आवरण, और दाईं ओर हमारे अपने शब्दों में उसका सार, जो पुस्तक को ध्यान से पढ़कर लिखा गया है — उसकी रचना कैसी है, वह क्या सिखाती है, और पाठक उससे क्या पा सकता है।



विषय-सूची

01	योग की पूर्णता	4
02	पूर्ण प्रश्न पूर्ण उत्तर	6
03	जीवन का स्रोत जीवन	8
04	आत्म-साक्षात्कार का विज्ञान	10
05	जन्म और मृत्यु से परे	12
06	हरिनाम जप की महिमा	14
07	मृत्यु की पराजय	16
08	योगपथ	18
09	आत्मा का प्रवास	20
10	राजविद्या	22
11	अध्यात्म और २१ वीं सदी	24
12	अन्य ग्रहों की सुगम यात्रा	26
13	मोह तथा संशय से परे	28
14	Quest for Enlightenment	30
15	Bhakti: The Art of Eternal Love	32
16	कृष्ण की ओर	34
17	कृष्णभावनामृत की प्राप्ति	36
18	कृष्णभावनामृत एक अनुपम उपहार	38
19	कृष्णभावनामृत सर्वोत्तम योग-पद्धति	40
20	रसराज श्रीकृष्ण	42
21	Preaching Is the Essence	44
22	Spiritual Master and Disciple	46
23	भगवान् श्री चैतन्य महाप्रभु का शिक्षामृत	48
24	देवहूतिनन्दन भगवान् कपिल का शिक्षामृत	50
25	महारानी कुन्ती की शिक्षाएँ	52
26	प्रह्लाद महाराज के दिव्य उपदेश	54
27	भागवत का प्रकाश	56
28	श्रीउपदेशामृत	58
29	भक्तिरसामृतसिन्धु	60
30	श्रीईशोपनिषद्	62
31	श्री ब्रह्म-संहिता	64
32	श्रीमद्भगवद्गीता यथारूप	66
33	श्रीमद्भगवतम्	68
34	श्रीचैतन्य-चरितामृत	70



योग की पूर्णता

योग वास्तव में किसलिए है, इस प्रश्न का भगवद्गीता का अपना उत्तर।

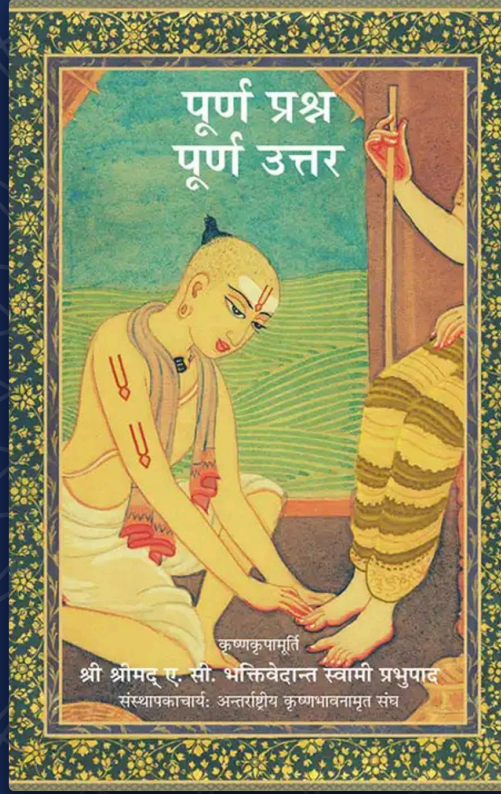


पश्चिम में योग की अनेक पद्धतियाँ लोकप्रिय हुई हैं, फिर भी श्रील प्रभुपाद इस छोटी-सी पुस्तक का आरम्भ यह कहकर करते हैं कि उनमें से किसी ने भी वास्तव में योग की पूर्णता नहीं सिखाई। इसके लिए वे भगवद्गीता की ओर मुड़ते हैं, जहाँ स्वयं श्रीकृष्ण युद्धभूमि में, युद्ध आरम्भ होने से पहले के थोड़े-से समय में, अपने मित्र अर्जुन को उपदेश देते हैं। यह पुस्तक गीता के छठे अध्याय का निकटता से अनुसरण करती है और उसके श्लोकों को एक के बाद एक उद्धृत करती है। यह आठ छोटे अध्यायों में व्यवस्थित एक संक्षिप्त और पठनीय परिचय है।

एक उल्लेखनीय विषय है ध्यान-पद्धति के प्रति स्वयं अर्जुन की प्रतिक्रिया। जब कृष्ण एकान्त स्थान में अकेले बैठने, शरीर को सीधा रखने और दृष्टि को स्थिर करने का वर्णन करते हैं, तो अर्जुन स्वीकार करते हैं कि चंचल मन को वश में करना वायु को वश में करने से भी कठिन लगता है। श्रील प्रभुपाद समझाते हैं कि गीता इस विधि को झूठा कहकर अस्वीकार नहीं करती, बल्कि यह दिखाती है कि वर्तमान युग में यह व्यावहारिक नहीं है। काम-काज, परिवार और शहरी जीवन में व्यस्त लोग इसकी कठोर शर्तों को शायद ही पूरा कर सकते हैं।

उसके स्थान पर यह पुस्तक भक्तिपूर्वक कर्म के योग और कृष्ण के निरन्तर ध्यान को प्रस्तुत करती है। श्रील प्रभुपाद भक्तियोग की नौ विधियों का वर्णन करते हैं और श्रवण तथा कीर्तन को सबसे महत्वपूर्ण बताते हैं, विशेषकर हरे कृष्ण मंत्र के सामूहिक कीर्तन को। वे बताते हैं कि मौन ध्यान के विपरीत, कीर्तन में जितने अधिक लोग जुड़ें, उतना ही अच्छा है। वे शरीर और मन के संयम, द्वन्द्वों तथा शरीर की उपाधियों से मुक्ति, और उस योगी की सान्त्वनादायक गति की भी चर्चा करते हैं जो एक जीवन में मार्ग पूरा नहीं कर पाता।

अन्तिम अध्याय योग को कृष्ण के साथ हमारे खोए हुए सम्बन्ध की पुनर्स्थापना के रूप में वर्णित करते हैं। कर्मयोग, ज्ञानयोग और अष्टांगयोग को एक ही सीढ़ी के सोपानों के रूप में दिखाया गया है, जिसका सबसे ऊँचा सोपान भक्तियोग है, अर्थात् परम पुरुष की प्रेममयी सेवा। पुस्तक गीता के उस श्लोक के साथ समाप्त होती है जो कहता है कि सर्वोच्च योगी वह है जो श्रद्धापूर्वक सदा कृष्ण में स्थित रहता है। पाठक यह समझकर लौटते हैं कि हर सच्चे योग का लक्ष्य कृष्ण-प्रेम है, और यह लक्ष्य आज हर किसी के लिए खुला है।



पूर्ण प्रश्न पूर्ण उत्तर

भारत में एक युवा अमेरिकी जिज्ञासु की श्रील प्रभुपाद के साथ खुली बातचीत।



यह पुस्तक श्रील प्रभुपाद और बॉब के बीच हुई वार्ताओं की एक श्रृंखला को प्रस्तुत करती है, जो एक युवा अमेरिकी थे और पीस कॉर्प्स की ओर से बिहार के एक हाई स्कूल में विज्ञान-शिक्षक के रूप में सेवा कर रहे थे। एक रूढ़िवादी यहूदी परिवार में पले-बढ़े और भगवद्गीता तथा हरे कृष्ण कीर्तन की ओर आकर्षित बॉब सच्ची आध्यात्मिक अनुभूति पाने की आशा में भारत आए थे। मन्दिरों में और विभिन्न गुरुओं के साथ जो कुछ उन्होंने देखा, उससे निराश होकर वे फ़रवरी 1972 में मायापुर गए, जो उस समय गंगा के पास तंबुओं और एक झोंपड़ी वाला धान का खेत भर था। वहाँ उनकी भेंट श्रील प्रभुपाद से हुई, जिन्होंने स्वयं इस पुस्तक का शीर्षक सुझाया।

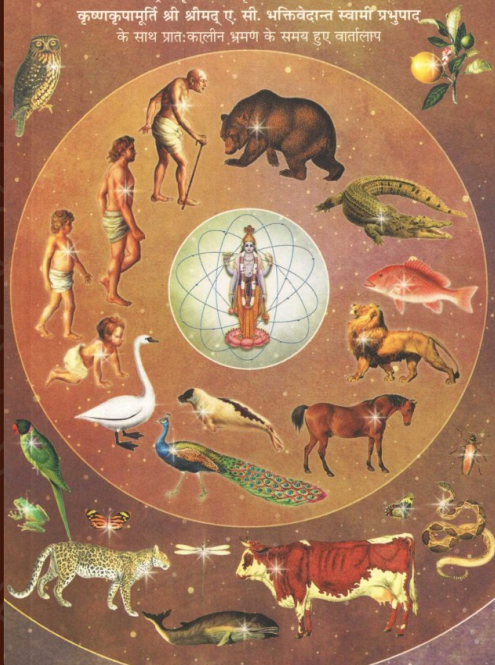
ये वार्ताएँ मायापुर में कई दिनों तक चलती हैं, और अन्तिम भेंट जुलाई 1972 में न्यूयॉर्क में होती है। बॉब पूरी ईमानदारी से प्रश्न पूछते हैं, और श्रील प्रभुपाद धैर्यपूर्वक, प्रायः सरल रोज़मर्रा के उदाहरणों से उत्तर देते हैं। वे कृष्ण नाम के अर्थ, अर्थात् सर्वाकर्षक, और जीवन के वास्तविक लक्ष्य की चर्चा करते हैं, जो है घर लौटना, भगवद्धाम लौटना। अन्य अध्याय वैदिक संस्कृति और वर्णाश्रम-धर्म, प्रकृति के तीन गुणों, और शुद्ध बनने के अर्थ पर विचार करते हैं।

बॉब अपने संदेहों को छिपाते नहीं, और इस पुस्तक का बहुत-सा आकर्षण इसी में है। जब वे कहते हैं कि वे अभी भक्तों की तरह अपना भोजन अर्पित नहीं कर सकते, तो श्रील प्रभुपाद उनसे बस इतना कहते हैं कि खाने से पहले भगवान् को धन्यवाद दें। ये वार्ताएँ गुरु के अधीन तपस्या, पूर्ण भक्त के गुणों, अच्छे और बुरे कर्म, और कृष्णभावनामृत में प्रगति करने के उपायों की भी पड़ताल करती हैं। न्यूयॉर्क में बॉब और उनकी पत्नी बारबरा पूछते हैं कि क्या हम तय कर सकते हैं कि अगले जन्म में हम क्या बनेंगे, और श्रील प्रभुपाद समझाते हैं कि यदि हम तय नहीं करेंगे, तो भौतिक प्रकृति हमारे लिए तय कर देगी।

1976 में लिखे अपने समापन शब्दों में लेखक बताते हैं कि कैसे उन्होंने और उनकी पत्नी ने धीरे-धीरे उन साधनाओं को अपनाया जिनकी श्रील प्रभुपाद ने सलाह दी थी। भक्तों का संग करने, एक भक्तियोग क्लब शुरू करने और बाद में टेक्सास में मन्दिर-जीवन अपनाने के बाद, 19 जुलाई 1976 को उन्हें ब्रह्मतीर्थ दास और भक्ति-देवी दासी के रूप में दीक्षा मिली। वे बताते हैं कि कैसे अवांछित आदतें छूट गईं, ठीक वैसे ही जैसे श्रील प्रभुपाद ने पहले से कहा था। पाठकों को एक सच्चे नए जिज्ञासु की दृष्टि से देखा गया, कृष्णभावनामृत का एक सहज और आत्मीय परिचय मिलता है।

जीवन का स्रोत

अन्तर्राष्ट्रीय कृष्णभावनामृत संघ के संस्थापकाचार्य
कृष्णकृपाप्रति श्री श्रीमद् ए. सी. भक्तिवेदान्त स्वामी प्रभुपाद
के साथ प्रातःकालीन भ्रमण के समय हुए वार्तालाप



जीवन का स्रोत जीवन

प्रातःकालीन सैर की वार्ताएँ, जो इस वैज्ञानिक दावे को चुनौती देती हैं कि जीवन जड़ पदार्थ से उत्पन्न होता है।

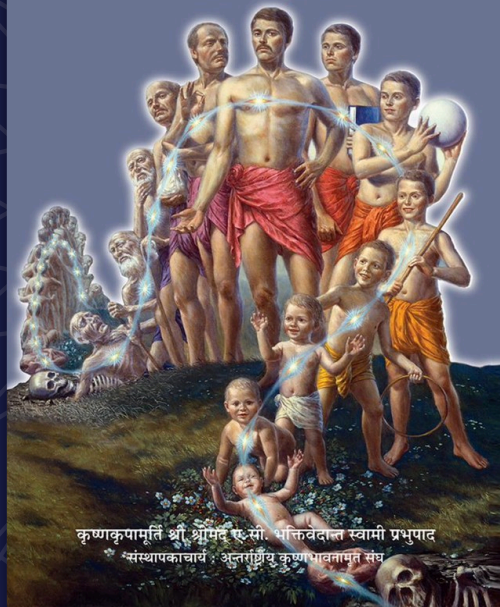
यह पुस्तक उन प्रातःकालीन सैर की वार्ताओं से ली गई है, जो श्रील प्रभुपाद ने 1973 में लॉस एंजेलिस क्षेत्र में अपने शिष्यों के साथ कीं और जिन्हें टेप पर रिकॉर्ड किया गया। जिन सुबहों में बातचीत विज्ञान की ओर मुड़ती, उनमें वे मुख्यतः थौडम दामोदर सिंह से बात करते, जो एक कार्बनिक रसायनशास्त्री थे और बाद में भक्तिवेदान्त इंस्टीट्यूट के निदेशक बने। पुस्तक सोलह सैरों के रूप में व्यवस्थित है, जिनमें से प्रत्येक पर तिथि अंकित है, अप्रैल से दिसम्बर 1973 तक। एक भूमिका पहले उन संदेहों का सर्वेक्षण करती है जिन्हें स्वयं वैज्ञानिक जीवन की रासायनिक उत्पत्ति के सिद्धान्तों के बारे में स्वीकार करते हैं।

मुख्य तर्क शीर्षक में ही कहा गया है: जीवन जड़ पदार्थ से नहीं, बल्कि जीवन से उत्पन्न होता है। श्रील प्रभुपाद वैज्ञानिकों से आग्रहपूर्वक कहते हैं कि वे दिखाएँ कि जीवन कहाँ से आता है, और ध्यान दिलाते हैं कि अपने सारे रसायनों के बावजूद वे एक भी जीवित प्राणी उत्पन्न नहीं कर सकते। ये सैरें डार्विन और विकासवाद, चन्द्रमा पर जीवन न होने के दावे, और इस वैदिक शिक्षा पर भी विचार करती हैं कि सभी 84 लाख योनियाँ एक साथ रची गईं। पूरी पुस्तक में वे कृष्ण की दो शक्तियों, भौतिक और आध्यात्मिक, में भेद करते हैं और दिखाते हैं कि जड़ पदार्थ स्वयं आत्मा से आता है।

स्वर सजीव, सीधा और प्रायः विनोदपूर्ण है, क्योंकि वार्ताएँ एक विषय से दूसरे विषय पर सहजता से बढ़ती जाती हैं। श्रील प्रभुपाद तर्क देते हैं कि तथाकथित वैज्ञानिक उन्नति लोगों को जन्म-मृत्यु से मुक्त करने के बजाय प्रायः और अधिक दुःख उत्पन्न करती है। बाद की सैरों में अन्य साथी, जैसे हृदयानन्द दास गोस्वामी, और अन्य विषय भी आते हैं, जैसे कर्मी, ज्ञानी, योगी और भक्त के बीच के अन्तर, तथा तर्क और श्रद्धा का प्रश्न। अपने तर्कों के समर्थन में वे बीच-बीच में भगवद्गीता और श्रीमद्भागवतम् के श्लोक उद्धृत करते हैं।

अन्तिम सैर में श्रील प्रभुपाद सर्वोच्चता के अर्थ पर, और कृष्ण पर विचार करते हैं, जो अचिन्त्य, परम भाग्यशाली पुरुष और समस्त शक्तियों के स्रोत हैं। पुस्तक सच्चे जिज्ञासुओं से यह आग्रह करते हुए समाप्त होती है कि वे किसी आत्म-साक्षात्कारी गुरु के पास जाकर सत्य को जानें। पाठकों को भौतिकवादी विज्ञान की एक स्पष्ट आध्यात्मिक समीक्षा मिलती है। उन्हें अपनी बुद्धि को आत्मा और उसके स्रोत को समझने में लगाने का निमंत्रण भी मिलता है।

आत्म-साक्षात्कार का विज्ञान



आत्म-साक्षात्कार का विज्ञान

आत्मा, गुरु और भगवान् पर साक्षात्कार, प्रवचन, लेख और पत्र।

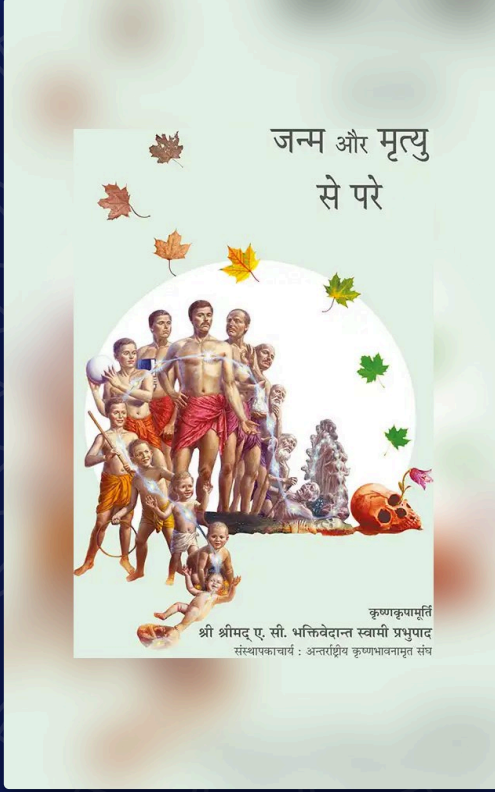


यह पुस्तक छत्तीस चयनित रचनाओं का संग्रह है, जिनमें से अधिकांश पहली बार 1958 से 1977 के बीच बैक टू गॉडहेड पत्रिका में प्रकाशित हुई थीं। इनमें साक्षात्कार, प्रवचन, लेख और पत्र हैं, साथ ही एक पुस्तिका, चैतन्य-चरितामृत पर एक प्रवचन और एक बंगाली कविता का अनुवाद भी है। मुकुन्द गोस्वामी द्वारा लिखी प्रस्तावना 1966 में न्यूयॉर्क के बावरी इलाके के एक अँधेरे कमरे में श्रील प्रभुपाद से उनकी पहली भेंट को, और फिर सेकंड एवेन्यू तथा सैन फ्रांसिस्को तक उनके पीछे-पीछे जाने को याद करती है। चयनित रचनाएँ आठ शीर्षकों के अन्तर्गत रखी गई हैं, आत्मा के विज्ञान को सीखने से लेकर जीवन की पूर्णता प्राप्त करने तक।

पुस्तक मानव जीवन के उद्देश्य से आरम्भ होती है: कृष्ण के साथ अपने सम्बन्ध को जानना, जिनका प्रत्येक जीव एक अंश है। माइक रॉबिन्सन के साथ एक रेडियो साक्षात्कार में श्रील प्रभुपाद पुनर्जन्म और आत्मा को समझाते हैं, और पत्रों के एक आदान-प्रदान में वे एक हृदय-शल्य चिकित्सक को उत्तर देते हैं जो जानना चाहते हैं कि आत्मा क्या है। गुरु के चयन पर एक खण्ड इस बात की चर्चा करता है कि गुरु क्या है और सच्चे शिक्षकों को धोखेबाजों से कैसे अलग पहचानें। एक अन्य खण्ड सांस्कृतिक पृष्ठभूमि पर दृष्टि डालता है, जिसमें लॉस एंजेलिस टाइम्स में बर्कली के एक विद्वान के साथ इस प्रश्न पर हुई सार्वजनिक बहस भी शामिल है कि क्या कृष्णभावनामृत एक प्रामाणिक वैदिक परम्परा है।

कुछ सबसे यादगार रचनाएँ बहुत भिन्न पृष्ठभूमियों के लोगों के साथ हुई वार्ताएँ हैं। फ्रैंकफर्ट के पास एक प्रातःकालीन सैर पर श्रील प्रभुपाद बेनेडिक्टाइन संन्यासी फ्रादर इमैनुएल से कृष्ण और ईसा मसीह तथा भगवान् के नामों के कीर्तन के बारे में बात करते हैं। 1975 में शिकागो पुलिस के एक लेफ्टिनेंट के साथ एक साक्षात्कार में वे कहते हैं कि अपराध का वास्तविक उपचार हृदय को शुद्ध करना है। अन्य रचनाएँ वर्तमान युग के लिए योग, शान्ति के सूत्र, आध्यात्मिक साम्यवाद और आधुनिक विज्ञान की सीमाओं की चर्चा करती हैं।

बाद के खण्ड सनातन धर्म की ओर लौटने और जीवन की पूर्णता प्राप्त करने के विषय पर आते हैं। इनमें वह मार्मिक कविता भी है जो श्रील प्रभुपाद ने सितम्बर 1965 में तब लिखी थी जब उनका जहाज़ बोस्टन के निकट पहुँच रहा था, और जिसमें उन्होंने प्रार्थना की थी कि वे कृष्ण का संदेश पहुँचा सकें। पूरी पुस्तक में वे भगवद्गीता और श्रीमद्भागवतम् को उद्धृत करते हैं, और आध्यात्मिक जीवन को एक ऐसे विज्ञान के रूप में प्रस्तुत करते हैं जिसे तर्क से समझा जा सकता है और व्यवहार में अनुभव किया जा सकता है। पाठक इन रचनाओं को क्रम से पढ़ सकते हैं, या जो भी उनकी रुचि को छू जाए, उसे कहीं से भी खोलकर पढ़ सकते हैं। दोनों ही तरह, वे श्रील प्रभुपाद को अनेक प्रकार के लोगों के प्रश्नों का स्पष्टता और करुणा के साथ उत्तर देते हुए पाते हैं।



जन्म और मृत्यु से परे

शाश्वत आत्मा कैसे मृत्यु से परे आध्यात्मिक जगत् तक पहुँच सकती है।



यह पुस्तक सबसे महत्वपूर्ण प्रश्न पर एक छोटी-सी पुस्तक है: मृत्यु के समय आत्मा का क्या होता है, और कोई जन्म-मृत्यु के चक्र से पूरी तरह परे कैसे जा सकता है। श्रील प्रभुपाद इसे भगवद्गीता के श्लोकों पर आधारित करते हैं, विशेषकर आठवें अध्याय के श्लोकों की एक लम्बी श्रृंखला पर, जिन्हें वे एक-एक करके समझाते हैं। यह पाँच अध्यायों में व्यवस्थित है। हर अध्याय पाठक को एक कदम और आगे ले जाता है, शरीर से आध्यात्मिक आकाश तक।

पहला अध्याय, "हम ये शरीर नहीं हैं", गीता की इस शिक्षा से आरम्भ होता है कि शरीर में स्थित आत्मा शाश्वत है और उसे कभी मारा नहीं जा सकता। श्रील प्रभुपाद इसे आत्म-साक्षात्कार का सबसे पहला कदम कहते हैं, और जोर देते हैं कि इसे केवल कहना नहीं, बल्कि अनुभव करना चाहिए। वे समझाते हैं कि चेतना आत्मा का लक्षण है, जैसे ताप और धुआँ अग्नि के लक्षण हैं, और केवल जड़ पदार्थ चेतना उत्पन्न नहीं कर सकता। इसी आधार पर वे आत्मा की वैदिक समझ की तुलना बौद्ध मत द्वारा आत्मा के निषेध से करते हैं।

बीच के अध्याय मृत्यु की कला और आत्मा के लिए खुले गन्तव्यों का वर्णन करते हैं। चूँकि पूर्णता की प्राप्ति मृत्यु के समय होनी चाहिए, इसलिए इसका अभ्यास जीवन के दौरान ही करना पड़ता है। श्रील प्रभुपाद समझाते हैं कि इस ब्रह्माण्ड के भीतर उच्चतर लोकों तक उन्नति अन्तिम लक्ष्य क्यों नहीं है, क्योंकि वहाँ भी जन्म और मृत्यु चलते रहते हैं। वे यह भी समझाते हैं कि निर्विशेष मुक्ति, अर्थात् आध्यात्मिक तेज में विलीन हो जाना, स्थिर क्यों नहीं है, और उस तक पहुँचने वाली आत्माएँ फिर से नीचे क्यों गिर सकती हैं।

अन्तिम अध्याय इस ब्रह्माण्ड से परे के आध्यात्मिक आकाश का वर्णन करते हैं, जहाँ कोई प्रतिस्पर्धा नहीं है और प्रत्येक लोक के अधिष्ठाता कृष्ण के एक विस्तार हैं। वहाँ भक्तिमय सेवा द्वारा कोई भी परम पुरुष को आमने-सामने देख सकता है, उनसे बात कर सकता है और उनके साथ खेल सकता है। पुस्तक यह समझाते हुए समाप्त होती है कि समस्त वैदिक शिक्षा का उद्देश्य भगवद्धाम लौटना है, और यह संदेश श्रील प्रभुपाद हर सच्ची आध्यात्मिक परम्परा में पाते हैं। पाठकों को मृत्यु के बाद क्या है, इसका एक स्पष्ट और आशापूर्ण चित्र मिलता है, और वहाँ तक पहुँचने का एक सरल मार्ग भी।

हरिनाम जप की महिमा



अन्तराष्ट्रीय कृष्णभावनामृत संघ के संस्थापकाचार्य
कृष्णकृपामूर्ति श्री श्रीमद् ए. सी. भक्तिवेदान्त स्वामी प्रभुपाद
की शिक्षाओं पर आधारित

हरिनाम जप की महिमा

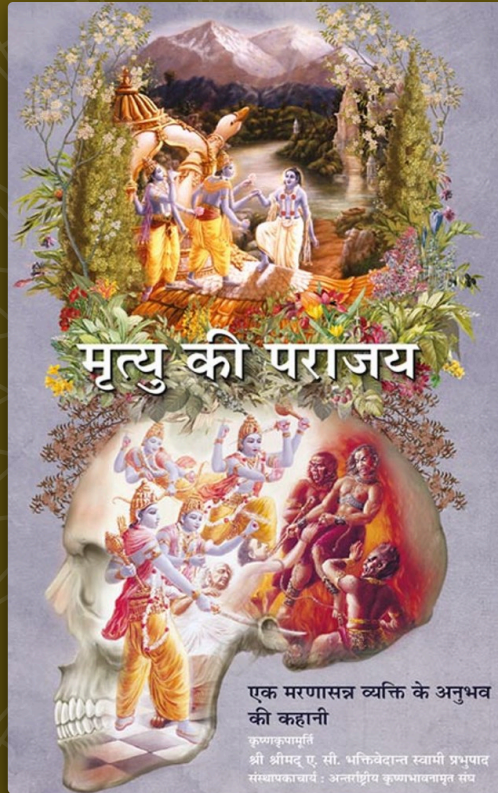
हरे कृष्ण मंत्र के जप की कथा, अर्थ और अभ्यास।

यह पुस्तक हरे कृष्ण मंत्र के जप-ध्यान का एक परिचय है, जिसमें श्रील प्रभुपाद के अपने शब्दों के साथ इतिहास, साक्षात्कार और व्यावहारिक मार्गदर्शन भी है। इसका आरम्भ जॉर्ज हैरिसन के एक छोटे लेख और सुख की सार्वभौमिक खोज पर एक निबन्ध से होता है। मंत्र पर एक अध्याय श्रील प्रभुपाद के उस निबन्ध के माध्यम से हरे कृष्ण शब्दों का अर्थ समझाता है, जो उस एल्बम में छपा था जिसने जॉर्ज हैरिसन और जॉन लेनन को पहली बार इस कीर्तन से परिचित कराया। इसमें 1982 का जॉर्ज हैरिसन का एक लम्बा साक्षात्कार भी है, जिसमें वे माला पर जप करने के अपने अनुभव के बारे में बताते हैं।

पुस्तक के सबसे प्रसिद्ध अध्यायों में से एक है जॉन की जागीर टिटनहर्स्ट पार्क में श्रील प्रभुपाद की जॉन लेनन, योको ओनो और जॉर्ज हैरिसन के साथ हुई बातचीत। वे शान्ति और मुक्ति के मार्ग के रूप में हरे कृष्ण मंत्र की शक्ति के बारे में बात करते हैं। एक अन्य अध्याय बताता है कि कैसे श्रील प्रभुपाद 1965 में यह मंत्र पश्चिम में लाए, और न्यूयॉर्क तथा सैन फ्रांसिस्को में, और 1969 से लन्दन में, जिज्ञासुओं को मोहित कर दिया। एक बाद का अध्याय बताता है कि ब्रिटेन में कीर्तन का उदय पहली बार कैसे हुआ।

फिर पुस्तक जप को उसके व्यापक इतिहास में रखकर देखती है। यह अनेक संस्कृतियों और परम्पराओं में भगवान् के नामों के जप का पता लगाती है, फिर श्री चैतन्य महाप्रभु के जीवन की कथा कहती है, जिन्होंने पाँच सौ वर्ष पहले भारत में सामूहिक कीर्तन का प्रसार किया। एक अध्याय हरिदास ठाकुर की कथा सुनाता है, जिनका जन्म एक मुस्लिम परिवार में हुआ था और जिनके अटल जप ने उन्हें लुभाने के लिए भेजी गई एक वेश्या का जीवन बदल दिया। अन्य अध्याय मंत्र-ध्यान के विज्ञान को और उन अनेक लाभों को समझाते हैं जिनका अनुभव निष्ठावान जप करने वाले करते हैं।

अन्तिम अध्याय जप की सरल, व्यावहारिक विधियाँ बताता है। यह समझाता है कि 108 मनकों की माला कैसे बनाएँ और उसका उपयोग कैसे करें, एक माला जप कैसे करें, और कीर्तन में मिलकर गाना व्यक्तिगत जप का पूरक कैसे बनता है। यह भी बताया गया है कि जो दीक्षा लेना चाहते हैं, उन्हें विधि-विधानों का पालन करना चाहिए और प्रतिदिन कम से कम सोलह माला जप करना चाहिए। पाठक स्वयं जप आरम्भ करने की प्रेरणा और जानकारी दोनों पाते हैं, ताकि वे उस सुख का स्वाद ले सकें जिसका वचन यह पुस्तक अपने शीर्षक में देती है।



मृत्यु की पराजय

एक पापी मनुष्य का मृत्यु से सामना, और वह पवित्र नाम जिसने उसे बचा लिया।



यह पुस्तक अजामिल का नाटकीय इतिहास बताती है, जो कान्यकुब्ज का एक ब्राह्मण था और जिसने अपने सिद्धान्त त्याग दिए, एक वेश्या दासी से विवाह किया और दूसरों को ठगकर तथा लूटकर जीवन बिताया। यह कथा श्रीमद्भागवतम् के छोटे स्कन्ध से है, जहाँ शुकदेव गोस्वामी इसे राजा परीक्षित को सुनाते हैं। पुस्तक उन श्लोकों, श्रील प्रभुपाद के तात्पर्यों के चयनित अंशों, और 1970-71 की सर्दियों में पश्चिमी शिष्यों के साथ भारत-यात्रा के दौरान दिए गए उनके प्रवचनों के अंशों को एक साथ पिरोती है। प्रकाशक आरम्भ में इस कथा को मृत्यु के निकट के अनुभवों और शरीर से बाहर के अनुभवों की आधुनिक रिपोर्टों के साथ रखकर देखते हैं।

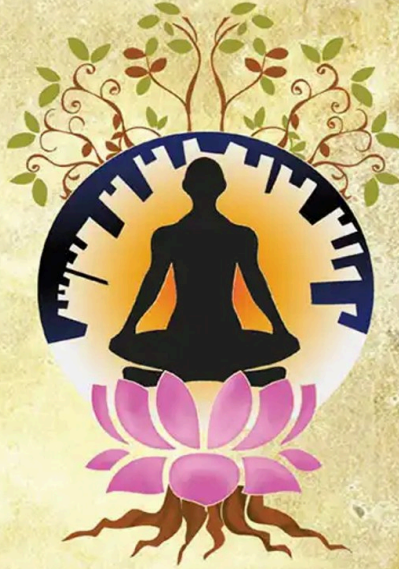
अठासी वर्ष की आयु में मृत्यु-शय्या पर पड़ा अजामिल मृत्यु के स्वामी यमराज के भयंकर दूतों को उसे घसीटकर ले जाने के लिए आते देखकर आतंकित हो जाता है। भय में वह ज़ोर से अपने सबसे छोटे पुत्र नारायण का नाम पुकारता है, और तुरन्त भगवान् विष्णु के दूत, विष्णुदूत, उन्हें रोकने आ पहुँचते हैं। इसके बाद धर्म, दण्ड और वास्तव में कौन ले जाए जाने योग्य है, इस पर एक तीखी बहस होती है। विष्णुदूत घोषणा करते हैं कि केवल नारायण का पवित्र नाम लेने से, बिना इरादे के भी, अजामिल अपने पापमय जीवन के फलों से पहले ही मुक्त हो चुका है।

इसी क्रम में श्रील प्रभुपाद आत्मा और उसके अगले जीवन के बारे में महत्वपूर्ण सत्य समझाते हैं: कि आत्मा शरीर से भिन्न है, कि विधि-विधान मानव जीवन को पशु-स्तर से ऊपर रखते हैं, और कि कुसंग तथा अनियंत्रित इच्छाएँ मनुष्य को नीचे गिरा देती हैं। दूसरा अवसर मिलने पर अजामिल पश्चात्ताप से भर उठता है, अपने मन और इन्द्रियों को वश में करने का संकल्प लेता है, और पूर्ण रूप से भक्ति में लगने के लिए गंगा के तट पर हरिद्वार चला जाता है। वहाँ वह फिर से विष्णुदूतों को देखता है और अपना शरीर छोड़कर उनके साथ आध्यात्मिक जगत् लौट जाता है।

अन्तिम अध्याय स्वयं यमराज की ओर मुड़ते हैं, जो अपने उलझन में पड़े सेवकों को समझाते हैं कि उनसे ऊपर एक परम स्वामी हैं, और भगवान् के पवित्र नाम का कीर्तन प्रायश्चित्त के हर वैदिक अनुष्ठान से बढ़कर है। पाठकों को मृत्यु, कर्म और आत्मा के गन्तव्य की गहरी समझ मिलती है। सबसे बढ़कर, यह पुस्तक पवित्र नाम की महिमा का गान करती है और सबसे आग्रह करती है कि वे भक्तों के संग में हरे कृष्ण का जप अपनाएँ।

योगपथ

आधुनिक युग के लिए योग



कृष्णकृपामूर्ति

श्री श्रीमद् ए. सी. भक्तिवेदान्त स्वामी प्रभुपाद
संस्थापकाचार्य : अन्तर्राष्ट्रीय कृष्णभावनामूल संघ

योगपथ

श्रील प्रभुपाद भगवद्गीता के छठे और आठवें अध्याय से वास्तविक योग समझाते हैं।



यह पुस्तक भगवद्गीता पर श्रील प्रभुपाद के प्रवचनों की एक श्रृंखला है, जो योग के उस दर्शन पर केन्द्रित है जिसे भगवान् कृष्ण छोटे और आठवें अध्याय में अर्जुन को समझाते हैं। प्रकाशकों की भूमिका इसे उन खिंचाव वाले अभ्यासों और व्यायामों से अलग करती है जिन्हें आज प्रायः योग कहा जाता है। यहाँ योग का अर्थ है आत्म-साक्षात्कार की एक प्राचीन पद्धति, परमेश्वर के साथ प्रेम में मिलन। पुस्तक कर्मयोग, ज्ञानयोग और आठ अंगों वाले अष्टांगयोग का सर्वेक्षण करती है, और दिखाती है कि ये सभी भक्तियोग में पूर्ण होते हैं।

श्रील प्रभुपाद कर्म के रूप में योग से आरम्भ करते हैं: चूँकि हम परमेश्वर के अंश हैं, इसलिए पूर्ण कर्म वह है जो कृष्ण के लिए, फल की आसक्ति के बिना किया जाए। फिर वे चंचल मन और इन्द्रियों को वश में करने, भगवान् को देखना सीखने, और खाने, सोने तथा मनोरंजन में संयम की आवश्यकता की चर्चा करते हैं। अर्जुन की इस स्पष्ट स्वीकारोक्ति के आधार पर कि मन को वश में करना वायु को वश में करने जितना कठिन है, वे समझाते हैं कि कठोर अष्टांग ध्यान-पद्धति इस कलियुग के लोगों के लिए अत्यन्त कठिन क्यों है।

बाद के अध्याय अभ्यास में दृढ़ता और स्थिरता, हृदय के भीतर परमात्मा के दर्शन, और उस योगी की गति की चर्चा करते हैं जो मार्ग पूरा नहीं कर पाता। श्रील प्रभुपाद मृत्यु के बाद के गन्तव्य को समझाते हैं, और यह भी कि अन्तिम क्षण की चेतना अगला जीवन कैसे निर्धारित करती है। वे कृष्ण का यह वचन प्रस्तुत करते हैं कि जो उनके धाम पहुँच जाता है, वह इस दुःखमय स्थान पर कभी नहीं लौटता।

पुस्तक का हृदय है आधुनिक युग के लिए योग: हरे कृष्ण महामंत्र के जप का सरल अभ्यास, जिसे कोई भी, कहीं भी अपना सकता है। श्रील प्रभुपाद दिखाते हैं कि व्यस्त और उथल-पुथल भरे जीवन में उलझे लोग भी इस जप के द्वारा मन को शुद्ध कर सकते हैं और परमेश्वर से जुड़ सकते हैं। पाठकों को यह स्पष्ट समझ मिलती है कि योग वास्तव में क्या है, और आज ही पूर्णता के मार्ग पर चल पड़ने का एक व्यावहारिक उपाय भी।

आत्मा का प्रवास



कृष्णकृपामूर्ति

श्री श्रीमद् ए. सी. भक्तिवेदान्त स्वामी प्रभुपाद
संस्थापकाचार्य : अन्तर्राष्ट्रीय कृष्णभावनामृत संघ

आत्मा का प्रवास

प्रवचन, साक्षात्कार और वार्ताएँ, जो पाठक को शरीर से आत्मा तक और आत्मा से कृष्ण तक ले जाती हैं।

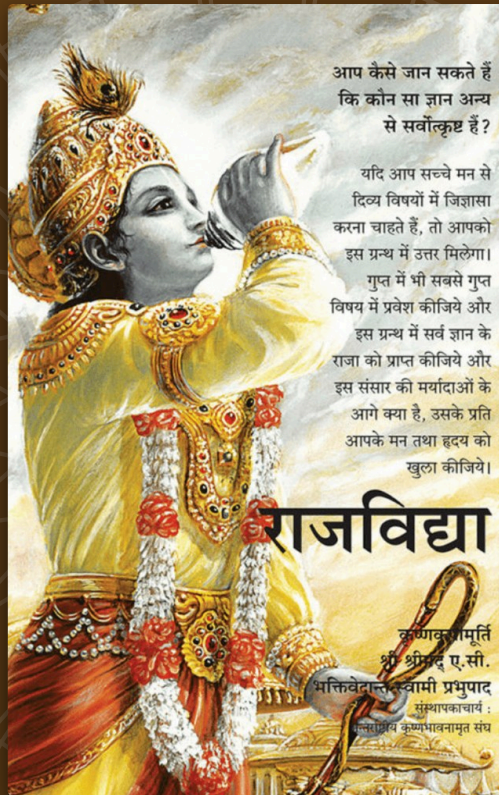


यह पुस्तक श्रील प्रभुपाद के प्रवचनों, वार्ताओं और साक्षात्कारों का संकलन है, जो सभी पहली बार बैक टू गॉडहेड पत्रिका में प्रकाशित हुए थे, जिसकी स्थापना उन्होंने 1944 में भारत में की थी। हर रचना छोटी और अपने-आप में पूर्ण है, इसलिए पुस्तक को शुरू से अन्त तक पढ़ा जा सकता है या विषय के अनुसार कहीं से भी खोला जा सकता है। इसका केन्द्रीय विषय यह है कि हमारी चेतना, हमारा वास्तविक आन्तरिक स्वरूप, ही वह एकमात्र सम्पत्ति है जो सचमुच सदा हमारे पास रहती है। प्रकाशक इसे जिज्ञासुओं के लिए मार्गदर्शिका और हरे कृष्ण आन्दोलन के दर्शन का एक संक्षिप्त परिचय, दोनों के रूप में प्रस्तुत करते हैं।

पहला खण्ड आत्मा के विज्ञान की पड़ताल करता है, जिसकी शुरुआत 1973 में लॉस एंजेलिस कृष्ण केन्द्र के उद्यान में भौतिकी के प्रोफेसर ग्रेगरी बेनफ़र्ड के साथ हुई एक बातचीत से होती है। श्रील प्रभुपाद समझाते हैं कि शरीर और मन आत्मा के आवरण हैं, पुनर्जन्म का वर्णन करते हैं, और दिखाते हैं कि आत्मा की उपस्थिति चेतना से जानी जाती है। अतिचेतना और आनन्द-सिद्धान्त पर आगे के खण्ड कृष्ण को परम पुरुष, परम कलाकार और हमारे प्रेम के वास्तविक पात्र के रूप में प्रकट करते हैं।

अन्य अध्याय गुरु तथा योग और ध्यान के अभ्यास पर बात करते हैं। 1968 में लॉस एंजेलिस में एक बेबाक टेलीविज़न साक्षात्कार में श्रील प्रभुपाद उस समय के अनेक स्वयंभू गुरुओं की पोल खोलते हैं, और अन्यत्र वे प्रामाणिक गुरु के गुण गिनाते हैं। वे भगवद्गीता के शास्त्रीय योग को समझाते हैं, बताते हैं कि मन से मित्रता कैसे करें, और यह भी कि इस युग के लिए अनुशंसित ध्यान हरे कृष्ण का जप क्यों है।

अन्तिम खण्ड आध्यात्मिक ज्ञान को संसार की समस्याओं पर लागू करते हैं, जिनमें हिंसा, अभाव, कसाईखाने, व्यापार और शान्ति की खोज शामिल हैं। शिष्यों के साथ सजीव वार्ताओं में श्रील प्रभुपाद प्लेटो, मार्क्स, फ्रायड और डार्विन जैसे विचारकों की परख करते हैं और उनके विचारों की तुलना आत्मा की वैदिक समझ से करते हैं। पुस्तक अपूर्ण कल्पना के बजाय गुरु-परम्परा से प्राप्त ज्ञान पर समाप्त होती है। पाठकों को इसका एक व्यापक और रोचक चित्र मिलता है कि कृष्णभावनामृत जीवन के गहनतम प्रश्नों का उत्तर कैसे देता है।



आप कैसे जान सकते हैं
कि कौन सा ज्ञान अन्य
से सर्वोत्कृष्ट है?

यदि आप सच्चे मन से
दिव्य विषयों में जिज्ञासा
करना चाहते हैं, तो आपको
इस ग्रन्थ में उतर मिलेगा।
गुप्त में भी सबसे गुप्त
विषय में प्रवेश कीजिये और
इस ग्रन्थ में सर्व ज्ञान के
राजा को प्राप्त कीजिये और
इस संसार की मर्यादाओं के
आगे क्या है, उसके प्रति
आपके मन तथा हृदय को
खुला कीजिये।

राजविद्या

कृष्णकृतमूर्ति
श्री श्रीमद् ए. सी.
भक्तिवेदान्तसुखामी प्रभुपाद
संस्थापकाचार्य :
गोपनीय कृष्णभावनामृत संघ

राजविद्या

भगवद्गीता का सबसे गोपनीय ज्ञान: कृष्ण को जानना और उनके लिए कर्म करना।



यह पुस्तक भगवद्गीता के प्रमुख श्लोकों की श्रील प्रभुपाद द्वारा की गई व्याख्या है, जो नौवें अध्याय पर केन्द्रित है, जहाँ कृष्ण अर्जुन को सबसे गोपनीय ज्ञान प्रदान करते हैं। पुस्तक भगवान् के इस वचन से आरम्भ होती है कि इस ज्ञान को जानने से मनुष्य भौतिक अस्तित्व के दुःखों से मुक्त हो जाएगा। श्रील प्रभुपाद समझाते हैं कि वक्ता भगवान् हैं, जो समस्त ऐश्वर्यों के स्वामी हैं, और उनका ज्ञान समस्त ज्ञान का राजा है। वे यह भी दिखाते हैं कि यह विधि सुखद और अभ्यास में सरल है, जिसका केन्द्र भगवान् की महिमा का श्रवण और गायन है।

इसके अध्याय क्रमशः इस ज्ञान के विभिन्न पहलुओं से होकर आगे बढ़ते हैं। श्रील प्रभुपाद उस ज्ञान का वर्णन करते हैं जो हमें जन्म-मृत्यु के चक्र से परे ले जाता है, और कृष्ण की शक्तियों के उस ज्ञान का भी, जिसके अनुसार सब कुछ उनमें स्थित है, फिर भी वे उससे पृथक् रहते हैं। वे समझाते हैं कि महात्मा, अर्थात् महान् आत्माएँ, कृष्ण को सबका मूल जानकर अनन्य मन से उनकी उपासना कैसे करते हैं।

गीता के चौथे अध्याय का भी आधार लेते हुए, पुस्तक परम्परा को समझाती है, अर्थात् यह ज्ञान गुरु-शिष्य परम्परा के माध्यम से कैसे नीचे उतरता है। यह कृष्ण के प्राकट्य और लीलाओं का वर्णन करती है, जो उनकी अपनी अन्तरंगा शक्ति से सम्पन्न होती हैं। फिर श्रील प्रभुपाद दिखाते हैं कि वास्तविक ज्ञान का अर्थ है महान् आचार्यों के पदचिह्नों पर चलते हुए गुरु में श्रद्धा और कृष्ण के प्रति शरणागति।

कृष्ण के ज्ञान में कर्म पर केन्द्रित अन्तिम अध्याय गीता के इस प्रश्न को उठाता है कि कर्म क्या है और अकर्म क्या है। कुरुक्षेत्र की युद्धभूमि में अर्जुन का उदाहरण देकर श्रील प्रभुपाद समझाते हैं कि कृष्ण के लिए किया गया कर्म बाँधता नहीं, जबकि स्वार्थपूर्ण कर्म उलझा देता है। वे पाठकों को कृष्ण के कार्य में लगने और भगवद्गीता का संदेश दूसरों तक पहुँचाने के लिए प्रोत्साहित करते हैं, क्योंकि जो ऐसा करता है, वह भगवान् को अत्यन्त प्रिय होता है।

अध्यात्म और २१ वीं सदी



कृष्णकृपामूर्ति

श्री श्रीमद् ए.सी. भक्तिवेदान्त स्वामी प्रभुपाद
संस्थापकाचार्य: अन्तर्राष्ट्रीय कृष्णभावनामृत संघ

अध्यात्म और २१ वीं सदी

श्रील प्रभुपाद बम्बई की एक पत्रिका के धर्म और आधुनिक जीवन सम्बन्धी प्रश्नों के उत्तर देते हैं।

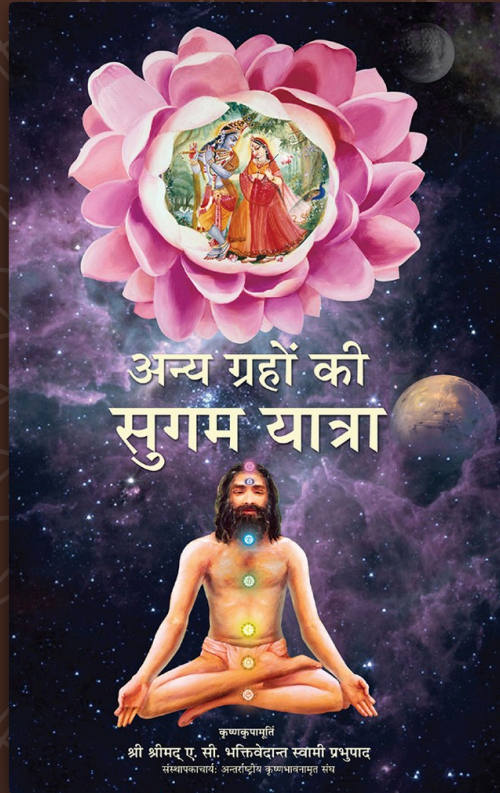


यह पुस्तक एक ही लम्बी बातचीत है, जो बम्बई की एक सांस्कृतिक और धार्मिक पत्रिका, भवन्स जर्नल, द्वारा श्रील प्रभुपाद को भेजी गई प्रश्नावली पर आधारित है। यह पत्रिका यही प्रश्न अनेक धार्मिक और आध्यात्मिक नेताओं से पूछ रही थी। उनके शिष्य पुष्ट कृष्ण प्रत्येक प्रश्न पढ़कर सुनाते हैं, और श्रील प्रभुपाद अपनी जीवंत, बोलचाल की शैली में उत्तर देते हैं। परिणामस्वरूप चौदह छोटे अध्याय बने हैं, जिनमें से प्रत्येक आज लोगों को उलझाने वाले किसी एक प्रश्न पर विचार करता है।

बातचीत इस प्रश्न से आरम्भ होती है कि क्या जनसाधारण पर धर्म का प्रभाव घट रहा है। श्रील प्रभुपाद कहते हैं कि हाँ, जैसी श्रीमद्भागवतम् ने इस युग के लिए भविष्यवाणी की है, और समझाते हैं कि धर्म के बिना मानव समाज केवल पशु समाज बन जाता है। वे दृढ़ता से कहते हैं कि वास्तविक धर्म का अर्थ है भगवान् का आदेश, और जिस धर्म में भगवान् की कोई स्पष्ट अवधारणा नहीं है, वह टिक नहीं सकता। इसके विपरीत वे कृष्ण को प्रस्तुत करते हैं, जिनका रूप और उपदेश स्पष्ट रूप से ज्ञात हैं।

आगे के अध्याय उस समय के विविध प्रश्नों पर व्यापक रूप से चर्चा करते हैं। वे कृष्ण द्वारा वर्णित, गुण और कर्म पर आधारित वर्णाश्रम व्यवस्था को जन्म पर आधारित जाति प्रथा से अलग करके दिखाते हैं। वे समझाते हैं कि गुरु क्यों आवश्यक है और किस प्रकार सभ्यता का अर्थ है नियमित जीवन। वे हृदय की शुद्धि पर, अद्वैतवादियों और द्वैतवादियों को भगवान् के सेवकों के रूप में एक साथ लाने पर, और भगवान् से प्रेम कैसे करें, इस पर भी बोलते हैं।

अन्तिम अध्यायों में श्रील प्रभुपाद शान्ति का मार्ग बताते हैं: कृष्ण को परम भोक्ता, परम स्वामी और सबके मित्र के रूप में समझना। वे समझाते हैं कि कृष्ण केवल भारत के लिए नहीं हैं, और भगवान् चैतन्य चाहते थे कि उनका पवित्र नाम हर नगर और गाँव में सुना जाए। धर्मान्तरण पर अन्तिम प्रश्न पुस्तक का निष्कर्ष सामने लाता है: यह आन्दोलन लेबल बदलने के लिए नहीं, बल्कि प्रत्येक जीव को कृष्ण के अंश के रूप में उसकी स्वाभाविक स्थिति में लौटाने के लिए है। पाठकों को धर्म, समाज और जीवन के उद्देश्य से जुड़े बड़े प्रश्नों के स्पष्ट, व्यावहारिक उत्तर मिलते हैं।



अन्य ग्रहों की सुगम यात्रा

आध्यात्मिक जगत् की यात्रा के वास्तविक विज्ञान के रूप में भक्तियोग।



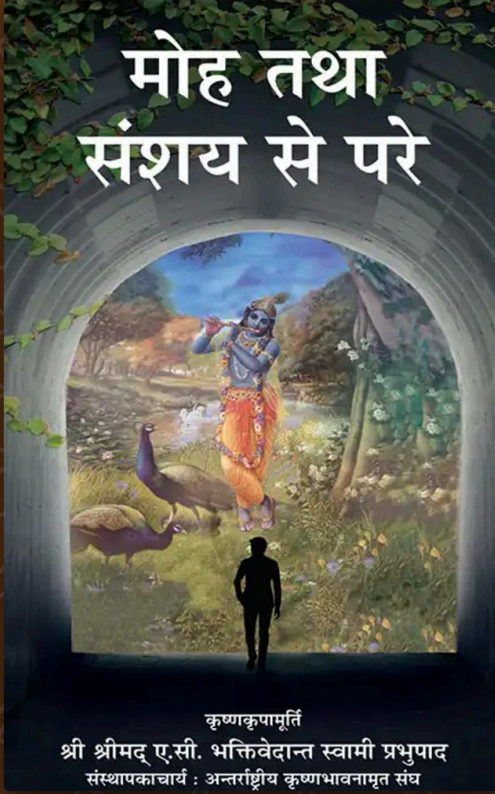
यह पुस्तक एक स्वाभाविक मानवीय लालसा से आरम्भ होती है: सदा सुख में जीना, और हाल के समय में, अन्य ग्रहों की यात्रा करना। अपनी प्रस्तावना में श्रील प्रभुपाद समझाते हैं कि यह इच्छा योग के द्वारा, और सबसे बढ़कर भक्तियोग के द्वारा पूरी हो सकती है, जिसका अभ्यास उचित मार्गदर्शन में घर पर ही किया जा सकता है। यह पुस्तक सामान्य जनता को, और विशेष रूप से दार्शनिकों और धर्मनिष्ठ लोगों को भेंट की गई है। इसके दो मुख्य भाग हैं, “प्रति-भौतिक जगत्” और “ग्रह-मण्डलों की विविधता”।

पहला भाग टाइम्स ऑफ़ इंडिया की 1959 की एक समाचार रिपोर्ट से आरम्भ होता है, जो एंटीप्रोटॉन की खोज और प्रति-जगत् के सिद्धान्त के लिए दिए गए नोबेल पुरस्कार के बारे में थी। श्रील प्रभुपाद इन विचारों को लेकर दिखाते हैं कि भगवद्गीता भगवान् की दो शक्तियों का वर्णन करती है, निकृष्ट भौतिक शक्ति और श्रेष्ठ आध्यात्मिक शक्ति। वे समझाते हैं कि जीव स्वरूपतः एक प्रति-भौतिक कण है। वास्तविक प्रति-भौतिक जगत् कभी नष्ट नहीं होता, जबकि प्रत्येक भौतिक ग्रह, सर्वोच्च ग्रह भी, समय आने पर नष्ट हो जाता है।

फिर वे उस योग-प्रक्रिया का वर्णन करते हैं जिससे एक अध्यात्मवादी शरीर छोड़कर अपने चुने हुए ग्रह पर जा सकता है। वे विशेष रूप से मृत्यु के समय की चेतना की अवस्था पर बल देते हैं, क्योंकि जो शरीर छोड़ते समय कृष्ण का स्मरण करता है, वह तुरन्त आध्यात्मिक जगत् में प्रवेश करता है। बार-बार के जन्म और मृत्यु के रोग की चिकित्सा को “भगवद्दाम वापसी” उपचार कहा गया है। वे इस भक्ति-मार्ग पर चलने वाले व्यक्ति के गुणों और साधनाओं की सूची भी देते हैं।

दूसरा भाग, जो उस समय लिखा गया जब मनुष्य चन्द्रमा की यात्रा कर रहे थे, समझाता है कि अन्तर्ग्रहीय यात्रा वैदिक ज्ञान के लिए कोई नई बात नहीं है। श्रील प्रभुपाद ब्रह्माण्ड के चौदह ग्रह-मण्डलों का वर्णन करते हैं और कृष्ण की यह चेतावनी उद्धृत करते हैं कि ब्रह्मलोक से भी लौटना पड़ता है। वे निष्कर्ष निकालते हैं कि हमारी बेचैनी वास्तव में हमारे असली घर, कृष्ण के धाम, गोलोक वृन्दावन की खोज है। पाठक को आमंत्रित किया जाता है कि वह इस मानव जीवन का उपयोग कृष्णभावनामृत विकसित करने में करे, जिसे वे भावुकता नहीं बल्कि विज्ञान के रूप में प्रस्तुत करते हैं।

मोह तथा संशय से परे



मोह तथा संशय से परे

श्रील प्रभुपाद वैदिक ज्ञान के प्रकाश में महान् पाश्चात्य विचारकों की समीक्षा करते हैं।

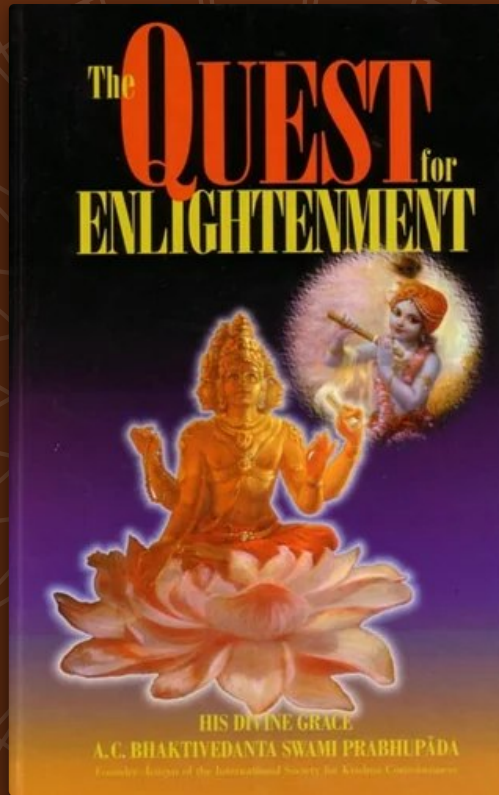


1970 के दशक के आरम्भ में श्रील प्रभुपाद ने वैदिक दर्शन के प्रकाश में पाश्चात्य दर्शन का विश्लेषण करने का निर्णय लिया। रिकॉर्ड की गई बातचीतों में उनके शिष्य हयग्रीव दास और श्यामसुन्दर दास ने उनके सामने प्रमुख पाश्चात्य विचारकों के चुने हुए अंश रखे, और उन्होंने प्रत्येक पर टिप्पणी की। यह पुस्तक उन्हीं बातचीतों पर आधारित है। इसके मुख्य भाग में पन्द्रह अध्याय हैं, जो सुकरात से आरम्भ होकर कार्ल युंग पर समाप्त होते हैं।

भूमिका पुस्तक के केन्द्रीय विचार को स्पष्ट करती है: सत्य की खोज के दो मार्ग हैं। पाश्चात्य दर्शन ने अधिकतर कल्पना और चिन्तन के आरोही मार्ग को अपनाया है, जो कभी भ्रम और संदेह से मुक्त नहीं हो सकता, क्योंकि मन और इन्द्रियाँ अपूर्ण हैं। वैदिक ऋषियों ने अवरोही मार्ग को श्रेष्ठ माना, जिसमें गुरु-परम्परा के माध्यम से कृष्ण से ज्ञान प्राप्त किया जाता है। पुस्तक इस बात पर बल देती है कि यह ज्ञान अंधा मत-विश्वास नहीं है, बल्कि इसे तर्क से परखा और भक्तियोग के द्वारा प्रमाणित किया जा सकता है।

प्रत्येक अध्याय विचारक के एक संक्षिप्त परिचय से आरम्भ होता है और फिर बातचीत को आगे बढ़ने देता है। श्रील प्रभुपाद नैतिकता को सापेक्ष मानने वाले मत का विरोध करने के लिए सुकरात की सराहना करते हैं, वैदिक सामाजिक व्यवस्था समझाने के लिए प्लेटो के ग्रन्थ रिपब्लिक का उपयोग करते हैं, और भगवान् तथा मनुष्य के विषय में अरस्तू की कल्पनाओं की कड़ी आलोचना करते हैं। ओरिजेन के साथ वे पुनर्जन्म पर सहमति प्रकट करते हैं, परन्तु इस विचार को अस्वीकार करते हैं कि आत्मा की सृष्टि की जाती है। साथ ही वे ऑगस्टीन, एक्विनास, कीर्केगार्ड, शोपेनहावर, डार्विन, मिल, मार्क्स, नीत्सो, फ्रॉयड और सार्त्र पर भी चर्चा करते हैं।

इसमें इन बातचीतों का एक कहीं अधिक विस्तृत संग्रह भी सम्मिलित है, जिसे स्वयं श्रील प्रभुपाद ने “द्वन्द्वात्मक अध्यात्मवाद: पाश्चात्य दर्शन पर एक वैदिक दृष्टि” नाम दिया था। इसमें प्लोटिनस, देकार्त और पास्कल से लेकर कांट, हेगेल, विलियम जेम्स और जॉन डिवी तक कई और विचारक सम्मिलित हैं। पूरे ग्रन्थ में श्रील प्रभुपाद बार-बार यही बात कहते हैं कि कोई भी चिन्तक भगवान् का स्पष्ट विचार नहीं देता, जबकि वेद स्वयं भगवान् से प्राप्त जानकारी देते हैं। पाठकों को पाश्चात्य विचारधारा की एक जीवंत यात्रा और भक्तियोग के मूल सिद्धान्तों की एक संक्षिप्त प्रस्तुति, दोनों प्राप्त होती हैं।



Quest for Enlightenment

भौतिकवाद के अंधकार से भगवान् की ओर साधकों का मार्गदर्शन करने वाले श्रील प्रभुपाद के प्रवचन।

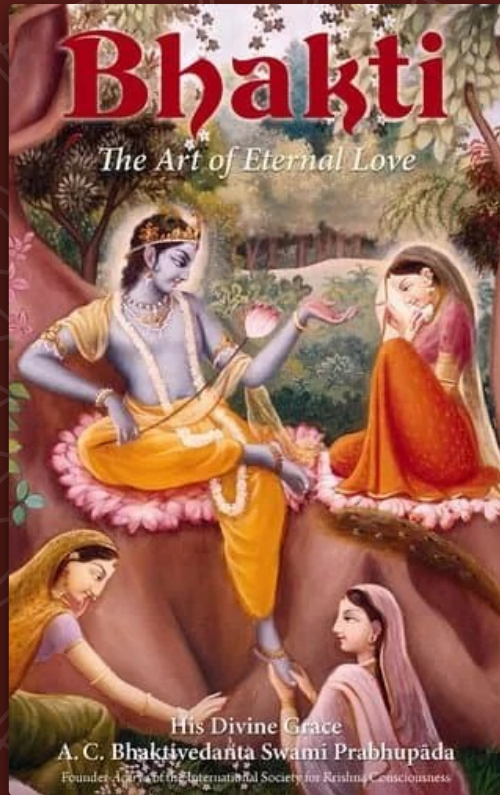


यह पुस्तक श्रील प्रभुपाद के उन प्रवचनों, वार्ताओं और बातचीतों का संग्रह है जो पहले बैक टू गॉडहेड पत्रिका में लेखों के रूप में प्रकाशित हुए थे, जिसे उन्होंने 1944 में भारत में आरम्भ किया था। इसकी भूमिका पूरे संग्रह को आधुनिक आध्यात्मिक साधक के लिए एक मार्गदर्शिका के रूप में प्रस्तुत करती है, जो भौतिकवाद की रात्रि से दिव्यता के दिन के प्रकाश की ओर ले जाती है। प्रत्येक लेख एक छोटी टिप्पणी से आरम्भ होता है कि वह कहाँ और कब दिया गया था, और ये स्थान पूरे विश्व में फैले हैं, बोस्टन विश्वविद्यालय और सिएटल से लेकर हैम्बर्ग, टोक्यो, स्टॉकहोम, मुम्बई और वृन्दावन तक। पुस्तक का आरम्भ 1 जनवरी 1969 को लन्दनवासियों को भेजे गए एक रिकॉर्ड किए हुए नववर्ष-संदेश से होता है, ठीक उस समय जब हरे कृष्ण आन्दोलन ग्रेट ब्रिटेन पहुँच रहा था।

आरम्भिक अध्याय इस खोज की नींव रखते हैं। श्रील प्रभुपाद समझाते हैं कि हम अपने बदलते शरीर नहीं, बल्कि शाश्वत आत्माएँ हैं, कि आत्मा को देखकर नहीं बल्कि प्रामाणिक अधिकारियों से सुनकर समझा जाता है, और कि मानव जीवन यह पूछने के लिए है कि हम कौन हैं और क्यों दुःख भोगते हैं। फिर वे बताते हैं कि आत्मा पदार्थ से कैसे भिन्न है, आत्मा मानो किसी स्वप्न में गिरने की तरह भौतिक जीवन में कैसे आ गिरी, और कृष्ण की शक्तियों का उपयोग हमारे अस्तित्व को शुद्ध करने के लिए कैसे किया जा सकता है। पूरी पुस्तक में हरे कृष्ण कीर्तन और भगवान् चैतन्य की कृपा को इस कलह के युग में हृदय को शुद्ध करने के सबसे सरल साधन के रूप में प्रस्तुत किया गया है।

आगे के खण्ड समझाते हैं कि सच्चा गुरु कौन है और हमें उनकी आवश्यकता क्यों है, तथा इस युग के लिए योग और ध्यान को अपने जीवन के केन्द्र में कृष्ण को रखने के रूप में प्रस्तुत करते हैं। भौतिक समस्याओं के आध्यात्मिक समाधान वाले एक अध्याय में श्रील प्रभुपाद जिनेवा में अन्तरराष्ट्रीय श्रम संगठन के एक अधिकारी से सबके कल्याण के लिए समाज को संगठित करने के विषय में बात करते हैं, और न्यू वृन्दावन फ़ार्म समुदाय में शिष्यों से सादा जीवन की ओर लौटने पर चर्चा करते हैं। शिष्यों के साथ चर्चाओं का एक जीवंत अध्याय कार्ल युंग, सुकरात, ओरिजेन, थॉमस एक्विनास और ज्यां-पॉल सार्त्र के विचारों की समीक्षा करता है, और जिनेवा में एक प्रातःकालीन भ्रमण पर वे एक अकेले अंजीर की ओर संकेत करके दिखाते हैं कि भगवान् की सृष्टि हर वैज्ञानिक उपलब्धि से बढ़कर है।

अन्तिम अध्याय परम लक्ष्य के रूप में भगवत्प्रेम की ओर मुड़ता है, और भक्ति को कृष्ण की ओर आत्मा के प्रेम का स्वाभाविक प्रवाह बताता है, ठीक वैसे ही जैसे नदी समुद्र की ओर बहती है। पुस्तक इस्कॉन के परिचय और महात्मा दास द्वारा लिखी घर पर कृष्णभावनामृत की एक व्यावहारिक मार्गदर्शिका के साथ समाप्त होती है, जिसमें जप-कीर्तन, वेदी स्थापित करना, प्रसाद अर्पित करना और ग्रहण करना, तथा चार नियामक सिद्धान्त सम्मिलित हैं। पाठकों को आध्यात्मिक मार्ग का एक स्पष्ट मानचित्र और अपने ही घर में इसे आरम्भ करने के सरल कदम मिलते हैं।



Bhakti: The Art of Eternal Love

भक्ति पर रूप गोस्वामी की शिक्षाएँ: कृष्ण के साथ आत्मा का शाश्वत प्रेममय सम्बन्ध।



यह पुस्तक भक्तिमय सेवा का एक छोटा परिचय है, जो "द नेक्टर ऑफ़ डिवोशन" से लिया गया है; वह ग्रन्थ श्रील रूप गोस्वामी के भक्तिरसामृतसिन्धु का श्रील प्रभुपाद द्वारा प्रस्तुत सार-अध्ययन है। सम्पादक बताते हैं कि श्रील प्रभुपाद ने वृन्दावन में रूप गोस्वामी की समाधि के निकट, राधा-दामोदर मन्दिर के प्रांगण में अपने शिष्यों के लिए उस ग्रन्थ पर प्रवचनों की एक श्रृंखला दी थी। उन प्रवचनों के चयनित अंशों को स्वयं उस ग्रन्थ के उद्धरणों के साथ पिरोया गया है। पुस्तक इस अवलोकन से आरम्भ होती है कि शारीरिक प्रेम क्षणिक है, जबकि आत्मा और परमात्मा के बीच का प्रेम शाश्वत है।

एक आरम्भिक अध्याय बताता है कि कैसे रूप गोस्वामी, जो कभी बंगाल की मुस्लिम सरकार में मंत्री थे, वह पद छोड़कर भगवान् चैतन्य महाप्रभु के अनुयायी बने और प्रयाग में उनसे शिक्षा प्राप्त की। फिर श्रील प्रभुपाद समझाते हैं कि भक्ति क्या है: इन्द्रिय-भोग के क्षणभंगुर सुखों के विपरीत, भक्तिमय सेवा का रस कभी समाप्त नहीं होता। वे दिखाते हैं कि हर किसी में प्रेम करने की स्वाभाविक प्रवृत्ति होती है, जो परिवार से समाज और राष्ट्र तक फैलती है, किन्तु पूरी तरह तृप्त केवल कृष्ण से प्रेम करने में ही होती है।

इसके बाद पुस्तक शुद्ध भक्तिमय सेवा और शुद्ध भक्त की रूप गोस्वामी द्वारा दी गई परिभाषाएँ प्रस्तुत करती है। ऐसी सेवा अनुकूल होती है, सदा कृष्ण से सम्बन्धित होती है, और भौतिक इच्छाओं तथा मनोधर्मी कल्पना से मुक्त होती है। यह एक सक्रिय अनुशीलन है, जो किसी प्रामाणिक गुरु के मार्गदर्शन में शरीर और मन से किया जाता है।

अन्तिम अध्याय शुद्ध भक्ति के छह लक्षण गिनाता है, भौतिक कष्टों से तुरन्त राहत से लेकर स्वयं कृष्ण को भी आकर्षित करने की उसकी शक्ति तक। श्रील प्रभुपाद समझाते हैं कि भक्तिमय सेवा, विशेषकर पवित्र नामों का कीर्तन, किस प्रकार पापकर्मों के फलों को हृदय में स्थित उनके बीजों तक से उखाड़ देती है। पाठक भक्ति को प्रेम के एक शाश्वत सम्बन्ध और गहनतम सुख तक पहुँचने के एक व्यावहारिक मार्ग के रूप में समझ पाते हैं।

कृष्ण की ओर

कृष्णकृपापूर्ति श्री श्रीमद् ए. सी. भक्तिवेदान्त स्वामी प्रभुपाद
संस्थापकाचार्य : अन्तर्राष्ट्रीय कृष्णभावनामृत संघ



कृष्ण की ओर

क्षणिक सुखों से कृष्णभावनामृत के वास्तविक आनन्द तक ले जाने वाली एक छोटी
मार्गदर्शिका।

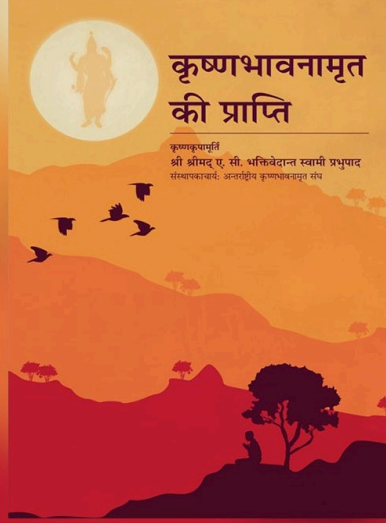


यह पाँच अध्यायों की एक छोटी पुस्तक है, जो भगवद्गीता में अर्जुन को दिए गए भगवान् कृष्ण के उपदेशों पर आधारित है। इसका आरम्भ एक सरल अवलोकन से होता है: हर कोई सुख की खोज में है, फिर भी बहुत कम लोग वास्तव में सुखी हैं। श्रील प्रभुपाद समझाते हैं कि भौतिक इन्द्रियों के माध्यम से हम जो सुख चखते हैं, वह क्षणिक और निम्न स्तर का है। वे दिखाते हैं कि वास्तविक सुख दिव्य है और क्षणिक वस्तुओं से परे है।

दूसरा अध्याय कृष्ण के नाम-जप और कृष्ण को जानने का मार्ग प्रस्तुत करता है, और हरे कृष्ण मंत्र को एक दिव्य ध्वनि-तरंग बताता है जो मन रूपी दर्पण की धूल साफ़ कर देती है। फिर श्रील प्रभुपाद समझाते हैं कि कृष्ण को सर्वत्र और सदा कैसे देखें। वे ज़ोर देते हैं कि अपना काम या कर्तव्य छोड़ने की आवश्यकता नहीं है, बल्कि उन्हें कृष्णभावनामृत में करना चाहिए, ठीक वैसे ही जैसे अर्जुन ने परमेश्वर की प्रसन्नता के लिए युद्ध किया।

चौथा अध्याय मूर्खों और बुद्धिमानों के मार्गों की तुलना करता है। कृष्ण बताते हैं कि उनकी माया-शक्ति को पार करना कठिन है, फिर भी जो उनकी शरण में आते हैं, वे उसे पार कर जाते हैं। श्रील प्रभुपाद उन विभिन्न प्रकार के लोगों का वर्णन करते हैं जो भगवान् के पास आते हैं, चाहे वे दुःखी हों, धन के इच्छुक हों या जिज्ञासु हों, और समझाते हैं कि ज्ञानी उन्हें विशेष रूप से प्रिय क्यों है।

परमेश्वर की ओर दिशा मोड़ने पर केन्द्रित अन्तिम अध्याय में बालक ध्रुव की कथा है, जिसने अपनी सौतेली माँ द्वारा अपमानित होने के बाद भगवान् की सहायता चाही। पूरी पुस्तक में श्रील प्रभुपाद हमें याद दिलाते हैं कि परमेश्वर पूर्ण हैं और हमारी वास्तविक पूर्णता उन्हीं के साथ सम्बन्ध में है। यह पुस्तक उन सबके लिए एक सौम्य और सुगम आरम्भ-बिन्दु है जो समझना चाहते हैं कि कृष्णभावनामृत क्या है और कृष्ण की ओर यात्रा कैसे आरम्भ करें।



कृष्णभावनामृत की प्राप्ति

पशु-जीवन से ऊपर उठकर कृष्णभावनामृत के आनंद तक पहुँचने पर छह निबंध।

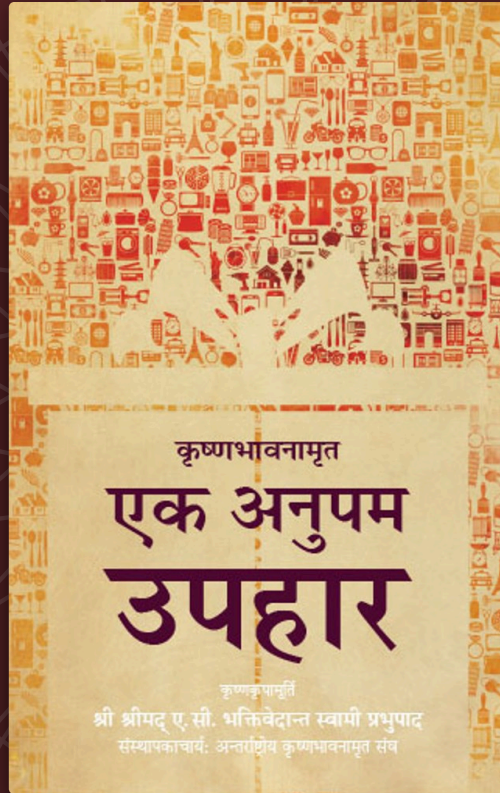


इस पुस्तक में छह अध्याय हैं, जिनमें श्रील प्रभुपाद समझाते हैं कि मनुष्य केवल शरीर बचाए रखने वाले जीवन से ऊपर उठकर कृष्णभावनामृत के शाश्वत सुख तक कैसे पहुँच सकता है। शुरुआत में वे बताते हैं कि हमारी इंद्रियाँ अपूर्ण हैं: हर बद्ध जीव गलतियाँ करता है, भ्रम में पड़ता है, धोखा देने की प्रवृत्ति रखता है और उसकी इंद्रियाँ सीमित हैं। इसी कारण सच्चा ज्ञान हमारी अपनी खोज से नहीं आ सकता। उसे गुरु-परंपरा के माध्यम से कृष्ण से प्राप्त करना होता है, जैसे अर्जुन ने भगवद्गीता प्राप्त की थी।

आरंभिक अध्याय मनुष्य और पशु के जीवन की तुलना करते हैं और सुख के लिए उस कठिन संघर्ष का वर्णन करते हैं जो हर जगह चल रहा है, यहाँ तक कि ऊँचे लोकों में भी, जहाँ बुढ़ापा, रोग और मृत्यु बने रहते हैं। श्रील प्रभुपाद समझाते हैं कि भगवान सनातन, पूर्ण ज्ञानमय और पूर्ण आनंदमय हैं, और जीव उनके छोटे अंश होने के कारण स्वाभाविक रूप से इन्हीं चीज़ों की खोज करते हैं। वे कहते हैं कि केवल इंद्रिय-सुख के लिए कड़ी मेहनत करना मनुष्य जीवन को व्यर्थ गँवाना है। आत्मा की असली विरासत आध्यात्मिक जगत में असीम आनंद है।

शांतिपूर्ण समाज वाले अध्याय में वे भगवद्गीता की उस शिक्षा का सहारा लेते हैं जिसमें शरीर को क्षेत्र और आत्मा को उसका ज्ञाता कहा गया है। वे दिखाते हैं कि जब लोग अवैध यौन-संबंध, नशा, मांसाहार और जुआ छोड़ देते हैं, और जब समाज के चारों वर्ग भगवान के अधीन मिलकर काम करते हैं, तब समाज शांतिपूर्ण बन सकता है। आगे के अध्याय बताते हैं कि कृष्ण को वे जैसे हैं वैसे कैसे जाना जाए, और उन तक पहुँचने के लिए सरल, सच्ची प्रार्थना ही पर्याप्त है। बिजली तथा किसी नगर के पुलिस और कल्याण विभागों जैसे रोज़मर्रा के उदाहरणों से वे दिखाते हैं कि कृष्ण की शक्ति एक ही है, यद्यपि वह अलग-अलग ढंग से कार्य करती है।

अंतिम अध्याय बताता है कि शंकराचार्य सहित महान आचार्य कृष्ण को परम भगवान स्वीकार करते हैं, और इस एक सत्य को स्वीकार कर लेने से हमारी शिक्षा पूर्ण हो जाती है। फिर श्रील प्रभुपाद हरे कृष्ण महामंत्र के कीर्तन को पूर्णता का सरल मार्ग बताते हैं, जो बिना किसी योग्यता के हर किसी के लिए खुला है। पाठक आत्मा को समझने से लेकर भक्तिमय जीवन जीने तक, आध्यात्मिक मार्ग की एक स्पष्ट तस्वीर लेकर लौटते हैं। पुस्तक इस आशा भरे संदेश के साथ समाप्त होती है कि हरे कृष्ण का कीर्तन कोई भी, किसी भी देश में और किसी भी युग में कर सकता है।



कृष्णभावनामृत एक अनुपम उपहार

कृष्ण के पवित्र नाम का कीर्तन आत्मा को कैसे मुक्त करता है, साथ में 1936 का एक श्रद्धांजलि भाषण।

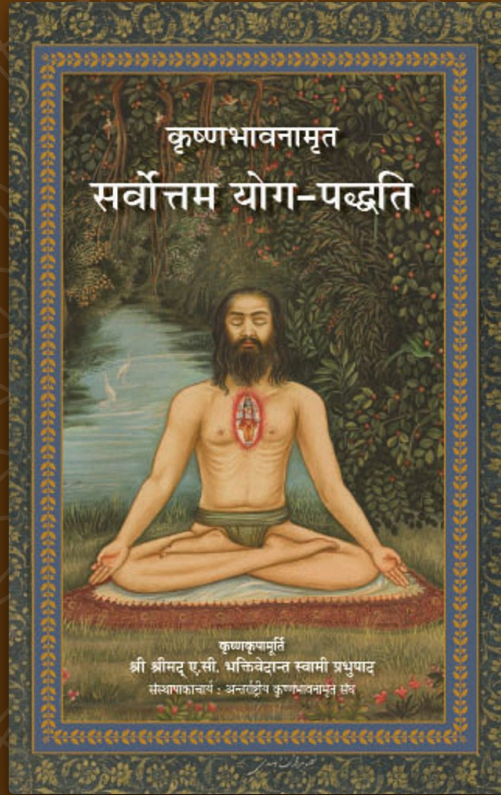


इस पुस्तक में श्रील प्रभुपाद कृष्णभावनामृत को भौतिक जीवन के उस पागलपन का उपचार बताते हैं, जिसमें हर कोई माया से ग्रस्त है। पुस्तक का बड़ा भाग श्रीमद्भागवतम् के छठे स्कंध में महाराज परीक्षित और शुकदेव गोस्वामी के बीच हुई चर्चा पर आधारित है। वहाँ वे विचार करते हैं कि पाप-कर्मों में डूबा एक पतित ब्राह्मण केवल भगवान के पवित्र नामों का उच्चारण करके कैसे बच गया। इस वृत्तांत से श्रील प्रभुपाद आधुनिक संसार में संघर्ष कर रहे हर व्यक्ति के लिए शिक्षाएँ निकालते हैं।

अध्याय क्रम से आगे बढ़ते हैं: कृष्ण के द्वारा आध्यात्मिक ज्ञान पाना, भौतिक दलदल से निकलना, प्रेम करना सीखना, आत्म-संयम सीखना और स्थिरता सीखना। श्रील प्रभुपाद समझाते हैं कि बार-बार पापों का प्रायश्चित्त करना उस हाथी जैसा है जो सरोवर में नहाकर किनारे पर आते ही अपने ऊपर फिर धूल डाल लेता है। वे कहते हैं कि केवल भक्ति ही आत्मा के रोग को जड़ से मिटाती है। वे यह भी दिखाते हैं कि लोग घड़ी के लोलक की तरह इंद्रिय-भोग और त्याग के बीच झूलते रहते हैं, और सब कुछ कृष्ण को अर्पित करने से सच्चा संतुलन आता है।

आगे के अध्याय शारीरिक उपाधियों से ऊपर उठने की बात करते हैं, और न्यूयॉर्क जैसे शहर की व्यस्त भीड़ की तुलना उन पशु-पक्षियों से करते हैं जो रोज़ भोजन और आश्रय की खोज में रहते हैं। कृष्ण की कृपा से गुरु मिलते हैं और गुरु की कृपा से कृष्ण मिलते हैं, जिसकी तुलना श्रील प्रभुपाद रात का अंत करने वाले सूर्योदय से करते हैं। शीर्षक वाला अध्याय सिखाता है कि भक्तियोग लोहार के भारी हथौड़े की तरह एक ही प्रहार में भौतिक जीवन का अंत कर देता है। वे पाठकों से आग्रह करते हैं कि इस मार्ग को सस्ता न समझें, बल्कि स्वयं भगवान का दिया हुआ एक अनुपम उपहार मानें, जो मृत्यु के भय को दूर कर देता है।

पुस्तक एक विशेष निधि के साथ समाप्त होती है: वह भाषण जो युवा श्रील प्रभुपाद ने, जब वे अभय चरण दास के नाम से जाने जाते थे, फरवरी 1936 में बंबई में दिया था। उन्होंने यह भाषण अपने गुरु श्रील भक्तिसिद्धांत सरस्वती ठाकुर के आविर्भाव-दिवस पर श्री गौड़ीय मठ के सदस्यों के सामने दिया और उन्हें जगद्गुरु के रूप में महिमामंडित किया। भाषण एक विनम्र प्रार्थना के साथ समाप्त होता है कि अपने दिव्य गुरु की कृपा से वे सदा याद रखें कि वे भगवान के एक छोटे से सेवक हैं। पाठकों को अपने जीवन को शुद्ध करने का व्यावहारिक मार्गदर्शन भी मिलता है और अपने गुरु के प्रति श्रील प्रभुपाद की भक्ति की एक दुर्लभ झलक भी।



कृष्णभावनामृत सर्वोत्तम योग-पद्धति

सदा कृष्ण का स्मरण करने वाला भक्तियोग ही योग का सर्वोच्च रूप क्यों है।



इस पुस्तक में श्रील प्रभुपाद भगवद्गीता के प्रमाण से समझाते हैं कि सर्वश्रेष्ठ योगी वह है जो सदा अपने भीतर कृष्ण का चिंतन करता है। इसके नौ अध्याय सीधी, बातचीत जैसी शैली में कहे गए हैं, जो प्रायः युवा श्रोताओं और उनके अपने शिष्यों को संबोधित हैं। वे गीता के छठे अध्याय में कृष्ण द्वारा सिखाई गई अष्टांग योग पद्धति का वर्णन करते हैं, जिसके लिए एकांत, पवित्र स्थान और कठोर अनुशासन चाहिए। वे बताते हैं कि आज के व्यस्त शहरों में ऐसा अभ्यास लगभग असंभव है, परंतु भक्तियोग सबके लिए खुला है।

वे समझाते हैं कि योग का अर्थ है आत्मा को परमेश्वर से जोड़ना, और इसीलिए कृष्ण को योगेश्वर कहा जाता है। "प्रकृति के नियमों से परे" और "योग का लक्ष्य" जैसे अध्याय दिखाते हैं कि भोग की हमारी इच्छा मूल भोक्ता कृष्ण से आती है और उनकी सेवा में ही पूर्ण होती है। वे गीता के सीधे अर्थ को तोड़ने-मरोड़ने के विरुद्ध सावधान करते हैं और कहते हैं कि जब कृष्ण "मेरी शरण में" कहते हैं, तो उनका अर्थ स्वयं से ही है। बीच-बीच में वे निजी अनुभव भी बताते हैं, जैसे कि अपने शिष्यों के साथ भारत आने-जाने की यात्राओं का प्रबंध कृष्ण कैसे कर देते हैं।

हरे कृष्ण मंत्र पर एक छोटा अध्याय बताता है कि कीर्तन उस बच्चे की सच्ची पुकार जैसा है जो अपनी माँ को बुलाता है, और इसमें भगवान तथा उनकी शक्ति से रक्षा की प्रार्थना होती है। अन्य अध्याय बताते हैं कि भक्तियोग कैसे काम करता है और भगवद्गीता को निजी व्याख्या से नहीं, बल्कि गुरु-परंपरा के माध्यम से क्यों सुनना चाहिए। वे श्रीमद्भागवतम् को वैदिक ज्ञान-वृक्ष का पका हुआ फल बताते हैं, जिसका रस भक्तों से सुनकर लिया जाता है। वे यह भी दिखाते हैं कि मनुष्य जीवन विशेष है क्योंकि इसमें हम खाने, सोने, संभोग और आत्मरक्षा से आगे बढ़कर आत्मा और भगवान के बारे में प्रश्न कर सकते हैं।

पुस्तक "शांति का वास्तविक सूत्र" के साथ समाप्त होती है, जो कहता है कि केवल वही व्यक्ति सच में शांत है जो पूरी तरह कृष्णभावनामृत में लीन है, क्योंकि उसकी कोई स्वार्थपूर्ण माँग नहीं होती। श्रील प्रभुपाद भक्तिमय जीवन की तुलना एक लता से करते हैं जो तब तक बढ़ती रहती है जब तक कृष्ण के चरणकमलों तक न पहुँच जाए। पाठक यह समझकर लौटते हैं कि योग का वास्तविक लक्ष्य कृष्ण के साथ प्रेममय संबंध है। वे भरोसा दिलाते हैं कि कोई भी केवल कीर्तन और श्रवण से इसकी शुरुआत कर सकता है।



रसराज श्रीकृष्ण

शरीर से परे, कृष्ण में सच्चा आनंद पाने पर एक छोटा प्रवचन।

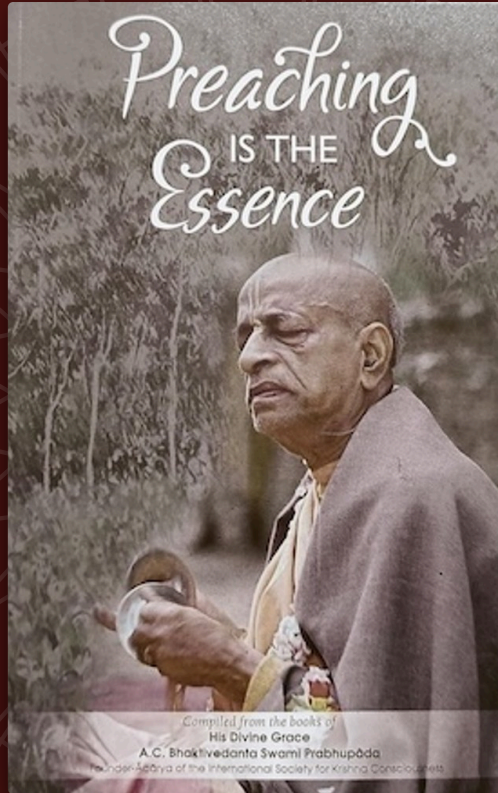


यह छोटी पुस्तक श्रील प्रभुपाद के एक ही प्रवचन को प्रस्तुत करती है, जो भगवद्गीता पर कक्षाओं की एक शृंखला के अंतर्गत दिया गया था। यह कृष्ण नाम के अर्थ, अर्थात् सर्वोच्च आनंद, से आरंभ होता है और इस सरल तथ्य से कि हर जीव आनंद की खोज में है। वे समझाते हैं कि स्वयं को शरीर मानने के कारण हम गलत जगह आनंद ढूँढते हैं और हर कदम पर निराश होते हैं। यह प्रवचन दिखाता है कि सच्चा आनंद कहाँ मिलता है।

श्रील प्रभुपाद अपने श्रोताओं को याद दिलाते हैं कि वे अमेरिकी, भारतीय या कोई और शारीरिक उपाधि नहीं, बल्कि शुद्ध आत्मा हैं, परम भगवान के सनातन अंश। वे समझाते हैं कि कृष्ण अपने नाम से भिन्न नहीं हैं, इसलिए हरे कृष्ण का कीर्तन और भगवद्गीता की चर्चा स्वयं कृष्ण के संग के समान है। वे कृष्ण-कथा के दो प्रकार भी बताते हैं: भगवद्गीता, जो कृष्ण ने कही, और श्रीमद्भागवतम्, जो कृष्ण के बारे में कही गई। जैसे बिजली से भरी धातु स्वयं विद्युतमय हो जाती है, वैसे ही जो कुछ कृष्ण से जुड़ता है वह आध्यात्मिक हो जाता है।

फिर प्रवचन प्रकृति के तीन गुणों की ओर मुड़ता है और दिखाता है कि कृष्ण के बारे में सुनना हमें तमोगुण और रजोगुण से उठाकर सतोगुण में स्थित करता है। वे भौतिकवादी के सुख की धारणा की तुलना सूअर के सुख से करते हैं, और भौतिक जीवन के दो रोग बताते हैं: खोई हुई वस्तु के लिए शोक और न मिली वस्तु के लिए लालसा। वे कहते हैं कि सच्ची स्वतंत्रता तब आती है जब हम भगवान के लिए कर्म करते हैं और कर्मफल त्याग देते हैं, जैसे एक निष्ठावान सैनिक आदेश का पालन करता है।

अंतिम पृष्ठों में प्रवचन समझाता है कि कितना भी पुण्य कर्म हमें जन्म, मृत्यु, बुढ़ापे और रोग से मुक्त नहीं कर सकता; यह केवल दिव्य कर्म से संभव है। भौतिक सुख की तुलना बिस्तर पर पड़े उस रोगी से की गई है जो कहता है कि वह ठीक है, या क्लोरोफॉर्म के प्रभाव में उस रोगी से जिसे दर्द नहीं होता पर ऑपरेशन फिर भी चल रहा होता है। पुस्तक कृष्ण को आनंद और शाश्वत सुख के भंडार के रूप में दिखाकर समाप्त होती है, वही सच्चा सुख जिसके लिए हम बने हैं। यह उन सबके लिए एक संक्षिप्त, स्पष्ट परिचय है जो जानना चाहते हैं कि स्थायी आनंद कहाँ मिलता है।



Preaching Is the Essence

कृष्णभावनामृत को दूसरों तक पहुँचाना सर्वोच्च सेवा क्यों है, इस पर श्रील प्रभुपाद के अपने शब्द।

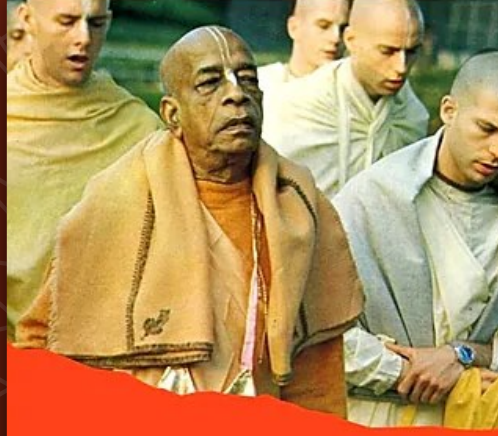


यह पुस्तक कोई एक रचना नहीं बल्कि एक संकलन है: इसका हर शब्द श्रील प्रभुपाद की पुस्तकों से लिया गया है, जिसे उनके शिष्यों रामेश्वर दास स्वामी और शुभानंद दास ने एकत्र और व्यवस्थित किया। उनके अनुवादों और तात्पर्यों के छोटे अंश, अधिकतर श्रीमद्भागवतम् और श्री चैतन्य-चरितामृत से, ऐसे शीर्षकों के अंतर्गत रखे गए हैं जिनमें से हर एक एक स्पष्ट बात कहता है। परिणामस्वरूप यह प्रचार की, यानी कृष्णभावनामृत को दूसरों तक पहुँचाने की, एक मार्गदर्शिका जैसी लगती है।

आरंभिक खंड दिखाते हैं कि भगवान स्वयं पतित आत्माओं का उद्धार करने आते हैं, और श्री चैतन्य महाप्रभु का संकीर्तन आंदोलन उनकी कृपा की लीला है। वहाँ से पुस्तक बताती है कि प्रचार हर शिष्य का कर्तव्य है और मानव समाज के लिए सर्वोच्च कल्याण-कार्य है। यह समझाती है कि प्रचारक कृष्ण को अत्यंत प्रिय है, कृष्ण उसकी रक्षा करते हैं, और जब वह सच्चा तथा गुरु-परंपरा के प्रति निष्ठावान होता है तो कृष्ण उसे शक्ति देते हैं। करुणा और सहनशीलता को प्रचारक की मनोदशा का हृदय बताया गया है।

अन्य खंड व्यावहारिक मार्गदर्शन देते हैं: विधि-विधानों का पालन करना और सोलह माला जप करना, दर्शन का अच्छी तरह अध्ययन करना, और लोगों के पास बहस के भाव से नहीं बल्कि विनम्रता से जाना। पुस्तक दिव्य ग्रंथों के प्रकाशन और वितरण पर विशेष बल देती है, और कहीं-कहीं इसे मंदिर बनाने से भी अधिक महत्वपूर्ण बताती है। यह भी बताया गया है कि पुरुषों की तरह स्त्रियाँ भी प्रचार कर सकती हैं, आवश्यकता होने पर प्रचारक साधारण वेशभूषा पहन सकते हैं, और भक्त को अपनी संतुष्टि के लिए समय से पहले एकांत में नहीं चले जाना चाहिए।

पुस्तक श्री चैतन्य-चरितामृत के लिए श्रील प्रभुपाद के समापन शब्दों के साथ समाप्त होती है, जिनमें वे याद करते हैं कि उनके गुरु ने पहली ही भेंट में उन्हें पश्चिमी देशों में अंग्रेज़ी में प्रचार करने को कहा था। वे याद करते हैं कि एक वर्ष की निराशा के बाद 1966 में कुछ युवा इस आंदोलन से जुड़े और इसे पूरे संसार में फैलाने में सहायता की। पाठक यह स्पष्ट समझ लेकर लौटते हैं कि कृष्णभावनामृत को बाँटना कोई अतिरिक्त कार्य नहीं, बल्कि भक्तिमय जीवन का सार है। यह हर उस भक्त के लिए प्रेरणा का स्रोत है जो श्री चैतन्य महाप्रभु के मिशन की सेवा करना चाहता है।



Spiritual Master & Disciple

His Divine Grace
A.C. Bhaktivedanta Swami Prabhupāda
Founder-ācārya of the International Society for
Krishna Consciousness

Spiritual Master and Disciple

गुरु, शिष्य और दीक्षा पर श्रील प्रभुपाद की शिक्षाओं का एक व्यवस्थित संग्रह।



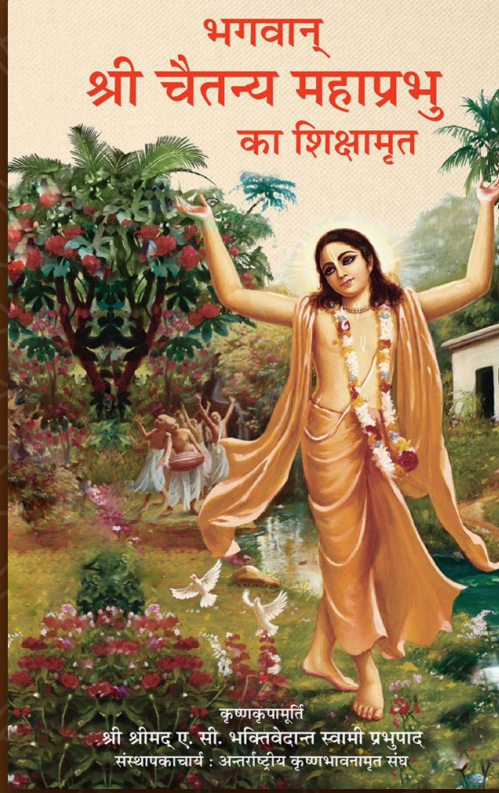
यह बड़ी पुस्तक श्रील प्रभुपाद की सभी पुस्तकों से गुरु और शिष्य के विषय में उनके निर्देशों को एक सावधानी से व्यवस्थित खंड में एकत्र करती है। इसका संकलन और संपादन उनके शिष्य शुभानंद दास ने किया, जो प्रस्तावना में बताते हैं कि यह विचार श्रील प्रभुपाद के इस संसार से प्रस्थान के आसपास के महीनों में आया। उस समय शिष्य गहरे प्रश्न पूछ रहे थे कि श्रील प्रभुपाद कौन हैं और उनके प्रस्थान के बाद उनके साथ उनका संबंध कैसा होगा। रामेश्वर स्वामी के प्रोत्साहन से संकलनकर्ता ने हर संबंधित शिक्षा को एकत्र करने का कार्य आरंभ किया, ताकि भक्त श्रील प्रभुपाद के अपने शब्दों में आश्रय और प्रेरणा पा सकें।

पुस्तक गुरु के सम्मान में प्रार्थनाओं और वैदिक तथा वैष्णव साहित्य के मुख्य श्लोकों से आरंभ होती है, और फिर पाँच मुख्य भागों में व्यवस्थित है। पहला भाग समझाता है कि गुरु को स्वीकार करना क्यों आवश्यक है: भगवान को समझने, पूर्ण ज्ञान पाने, भक्ति की कला सीखने और भौतिक जीवन से मुक्त होने के लिए। दूसरा भाग गुरु और आचार्य शब्दों को परिभाषित करता है और गुरु की पहचान, योग्यताओं और कर्तव्यों का वर्णन करता है।

तीसरा भाग गुरु-परंपरा के सिद्धांत को समझाता है और दिखाता है कि वैदिक ज्ञान और मंत्र आचार्यों की अटूट शृंखला के माध्यम से ही प्राप्त होने चाहिए। यह ब्रह्मा-मध्व-गौड़ीय संप्रदाय को भगवान ब्रह्मा से मध्वाचार्य होते हुए श्री चैतन्य महाप्रभु तक दिखाता है, और उन परंपराओं के बारे में सावधान भी करता है जो प्रामाणिक नहीं हैं। चौथा भाग शिष्य का वर्णन करता है: जिज्ञासा करना और सुनना, निर्देशों का पालन करना, गुरु की सेवा करना और उन्हें प्रसन्न करना, श्रद्धा रखना, विनम्र रहना और अपराधों से बचना।

अंतिम भाग दीक्षा के बारे में है: उसका अर्थ, उसका उद्देश्य, आवश्यक योग्यताएँ, और स्वीकृति से पहले गुरु और शिष्य का एक-दूसरे को परखना। यह भी समझाया गया है कि दीक्षा के द्वारा कोई भी सच्चा व्यक्ति ब्राह्मण स्तर तक उठ सकता है। खंड श्रील प्रभुपाद की एक संक्षिप्त जीवनी के साथ समाप्त होता है। पाठकों को गुरु और शिष्य के पवित्र संबंध को समझने के लिए श्रील प्रभुपाद की अपनी शिक्षाओं पर आधारित एक विश्वसनीय संदर्भ-ग्रंथ मिलता है।

भगवान्
श्री चैतन्य महाप्रभु
का शिक्षामृत



कृष्णकृपामूर्ति
श्री श्रीमद् ए. सी. भक्तिवेदान्त स्वामी प्रभुपाद
संस्थापकाचार्य : अन्तर्राष्ट्रीय कृष्णभावनामृत संघ

भगवान् श्री चैतन्य महाप्रभु का शिक्षामृत

चैतन्य-चरितामृत से लिया गया, कृष्ण के प्रति शुद्ध प्रेम का भगवान् चैतन्य का दर्शन।



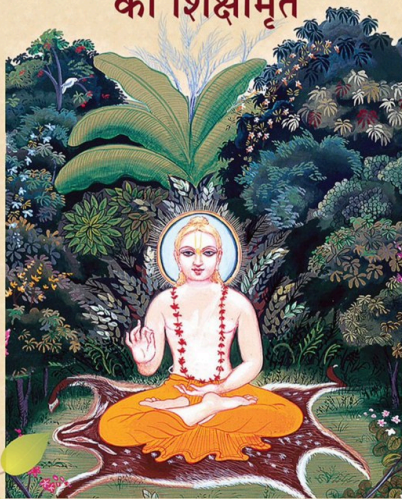
यह पुस्तक श्री चैतन्य महाप्रभु के दर्शन को उसी रूप में प्रस्तुत करती है जैसा कृष्णदास कविराज गोस्वामी द्वारा लिखित उनकी जीवनी चैतन्य-चरितामृत में दर्ज है। इसकी भूमिका मूल रूप से अप्रैल 1967 में न्यूयॉर्क शहर में दिए गए पाँच प्रातःकालीन प्रवचनों के रूप में प्रस्तुत की गई थी। उनमें श्रील प्रभुपाद समझाते हैं कि भगवान् चैतन्य स्वयं कृष्ण हैं, जो कृष्ण से प्रेम करना सिखाने के लिए भक्त के रूप में प्रकट हुए। पुस्तक में भगवान् चैतन्य के आठ श्लोक, शिक्षाष्टक, और श्रील भक्तिविनोद ठाकुर द्वारा लिखा एक प्राक्कथन भी सम्मिलित है।

पुस्तक का मुख्य भाग भगवान् चैतन्य द्वारा अपने प्रमुख अनुयायियों को दिए गए उपदेशों का अनुसरण करता है। प्रयाग में वे रूप गोस्वामी को भक्ति का विज्ञान सिखाते हैं। फिर अध्यायों की एक लम्बी श्रृंखला में वे सनातन गोस्वामी को जीव के विषय में, भगवान् तक कैसे पहुँचें इस विषय में, कृष्ण के असीम रूपों और अवतारों के विषय में, तथा उनके ऐश्वर्य और सौन्दर्य के विषय में शिक्षा देते हैं। इन अध्यायों में भक्त का, आसक्तिमय भक्ति का, और श्रीमद्भागवतम् के प्रसिद्ध आत्माराम श्लोक का भी वर्णन है।

इसके बाद महान् मायावादी विद्वानों के साथ भगवान् चैतन्य की भेंटों का वर्णन आता है। बनारस में वे प्रकाशानन्द सरस्वती और उनके अनुयायियों से बात करते हैं, जिन्होंने कीर्तन और नृत्य करने के लिए उनकी आलोचना की थी, और वेदान्त-अध्ययन का वास्तविक लक्ष्य समझाते हैं। जगन्नाथ पुरी में वे सात दिनों तक सार्वभौम भट्टाचार्य से वेदान्त-सूत्र की व्याख्या सुनते हैं, और फिर दिखाते हैं कि परम सत्य की साकार समझ ही श्रेष्ठ है। मायावादी संन्यासी और भट्टाचार्य, दोनों भक्ति की ओर परिवर्तित हो जाते हैं।

पुस्तक दक्षिण भारत में रामानन्द राय के साथ भगवान् चैतन्य की वार्ताओं के साथ समाप्त होती है। उनकी बातचीत, ताँबे से लेकर पारस-मणि तक धातुओं की परख की तरह, क्रमशः ऊपर उठती हुई कृष्ण के प्रति शुद्ध प्रेम और राधा-कृष्ण की लीलाओं तक पहुँचती है। पूरी पुस्तक में श्रील प्रभुपाद इस बात पर बल देते हैं कि ये शिक्षाएँ भगवद्गीता में कृष्ण के अपने उपदेश, कि उनकी शरण में आओ, का व्यावहारिक प्रदर्शन हैं। पाठकों को गौड़ीय वैष्णव दर्शन का एक स्पष्ट मानचित्र मिलता है, और उसके जीवंत अभ्यास के रूप में पवित्र नाम का कीर्तन भी।

देवहूतिनन्दन भगवान् कपिल का शिक्षामृत



कृष्णकृपामूर्ति

श्री श्रीमद् ए.सी. भक्तिवेदान्त स्वामी प्रभुपाद

संस्थापकाचार्य : अन्तर्राष्ट्रीय कृष्णभावनामृत संघ

देवहूतिनन्दन भगवान् कपिल का शिक्षामृत

भगवान् कपिल अपनी माता को भक्तियोग और आत्म-साक्षात्कार का मार्ग सिखाते हैं।



परम भगवान् के अवतार, भगवान् कपिल, सांख्य दर्शन के मूल आचार्य हैं। अपनी माता देवहूति को दी गई उनकी शिक्षाएँ श्रीमद्भागवतम् के तृतीय स्कन्ध में आती हैं। यह पुस्तक 1974 के वसन्त में मुम्बई, भारत में श्रील प्रभुपाद द्वारा पच्चीसवें अध्याय पर दिए गए प्रवचनों की एक श्रृंखला पर आधारित है, जहाँ से ये शिक्षाएँ आरम्भ होती हैं। इन प्रवचनों में उन्होंने प्रत्येक श्लोक को अपने लिखित तात्पर्य से भी अधिक विस्तार से समझाया।

प्राक्कथन पृष्ठभूमि प्रस्तुत करता है। कपिल के पिता, कर्दम मुनि, ने संन्यास ग्रहण किया और देवहूति को उनके दिव्य पुत्र की देखरेख में छोड़ दिया। तब देवहूति विनम्रतापूर्वक कपिल के पास जाती हैं, स्वीकार करती हैं कि वे अज्ञान में गिर गई हैं, और उनसे अपना मोह दूर करने की प्रार्थना करती हैं। प्राक्कथन यह भी बताता है कि कपिल का मूल सांख्य आस्तिक है, जो पदार्थ और आत्मा का विश्लेषण इसलिए करता है ताकि मनुष्य भक्ति, अर्थात् परमेश्वर के प्रति समर्पण, तक पहुँचे।

अध्याय एक-एक करके श्लोकों से होकर आगे बढ़ते हैं। श्रील प्रभुपाद भगवान् कपिल के अवतरण के उद्देश्य, प्रामाणिक गुरु के पास जाने की आवश्यकता, और आत्म-साक्षात्कार के लिए मन को शुद्ध करने की विधि पर चर्चा करते हैं। वे समझाते हैं कि भौतिक वस्तुओं के प्रति आसक्ति आत्मा को बाँधती है, जबकि वही आसक्ति भक्तों की ओर मोड़ दी जाए तो मुक्ति का द्वार खोल देती है। एक केन्द्रीय अध्याय साधु, अर्थात् पवित्र व्यक्ति, के लक्षणों का वर्णन करता है, जैसे सहनशीलता और सबके प्रति करुणा।

आगे के अध्याय समझाते हैं कि भक्ति स्वयं ही परम मुक्ति है, और भगवान् के दिव्य रूप पर ध्यान का वर्णन करते हैं। श्रील प्रभुपाद बार-बार साक्षात्कार-प्राप्त आत्माओं से कृष्ण के विषय में सुनने पर बल देते हैं, जो पूरी तरह समझ आने से पहले ही हृदय को शुद्ध कर देता है। वे निष्कर्ष देते हैं कि कृष्ण की कृपा से भक्ति में दृढ़ संकल्प मनुष्य को हर बाधा पार करने में समर्थ बनाता है। पाठकों को सभी योगों की अन्तिम पूर्णता के रूप में भक्तियोग का एक आत्मीय, व्यावहारिक परिचय मिलता है।



महारानी कुन्ती की शिक्षाएँ

महारानी कुन्ती की कृष्ण-स्तुतियाँ, श्रील प्रभुपाद द्वारा श्लोक-दर-श्लोक व्याख्या सहित।

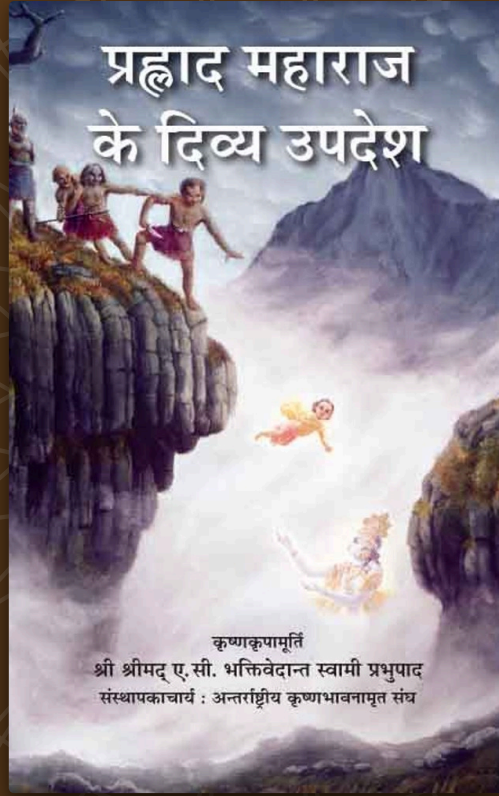


महारानी कुन्ती राजा पाण्डु की पत्नी, पाण्डवों की माता और भगवान् कृष्ण की बुआ थीं। भूमिका महाभारत से उनकी कथा फिर से सुनाती है: दुर्योधन के षड्यन्त्र, जलता हुआ महल, उनके पुत्रों का वनवास, और कुरुक्षेत्र का युद्ध। जब कृष्ण पाण्डवों के अन्तिम उत्तराधिकारी को अश्वत्थामा के अस्त्र से बचाते हैं और द्वारका के लिए प्रस्थान करने की तैयारी करते हैं, तब कुन्ती अपने हृदय की गहराई से उनकी स्तुति करती हैं। श्रीमद्भागवतम् के प्रथम स्कन्ध के वे छब्बीस श्लोक ही इस पुस्तक का विषय हैं।

प्रत्येक अध्याय एक श्लोक लेता है, जिसमें संस्कृत मूल, अनुवाद और श्रील प्रभुपाद की व्याख्या दी गई है। उनका तात्पर्य मूल रूप से 1962 में लिखा गया था, और पुस्तक में वे अधिक विस्तृत व्याख्याएँ भी जोड़ी गई हैं जो उन्होंने 1973 के वसन्त में न्यूयॉर्क और लॉस एंजेलिस केन्द्रों में प्रवचनों में दी थीं। “इन्द्रियों से परे”, “विपत्तियाँ आने दो” और “पूर्ण शरणागति” जैसे अध्याय-शीर्षक उनकी स्तुतियों के प्रवाह को दर्शाते हैं।

श्रील प्रभुपाद कुन्ती को भक्ति के एक आदर्श के रूप में प्रस्तुत करते हैं। यद्यपि उन्होंने किसी सामान्य व्यक्ति की सहनशक्ति से कहीं अधिक कष्ट सहे थे, फिर भी वे राहत नहीं माँगतीं। इसके बजाय वे माँगती हैं कि विपत्तियाँ बार-बार आएँ, क्योंकि संकट में वे कृष्ण का दर्शन कर पाती थीं, और उनका दर्शन बार-बार के जन्म और मृत्यु का अन्त कर देता है। वे उनकी इन शिक्षाओं को भी उजागर करते हैं कि कृष्ण आदि पुरुष हैं, इन्द्रियों से परे हैं, और उन लोगों की सम्पत्ति हैं जिनके पास भौतिक रूप से कुछ नहीं है।

पुस्तक कुन्ती की इस इच्छा के साथ समाप्त होती है कि उनका आकर्षण कृष्ण की ओर वैसे ही बहे जैसे गंगा समुद्र की ओर बहती है, जिसके बाद कृष्ण मुस्कुराकर उनकी स्तुतियाँ स्वीकार करते हैं। साथ ही श्रील प्रभुपाद उनके शब्दों को आधुनिक जीवन पर लागू करते हुए समझाते हैं कि जन्म, धन, शिक्षा और सौन्दर्य का अभिमान हमें कृष्ण से कैसे दूर रखता है। वे पाठक को यह भी याद दिलाते हैं कि इस युग में कृष्ण ने अपने पवित्र नाम, हरे कृष्ण महामन्त्र, के रूप में अवतार लिया है। पाठकों को शरणागति, कृतज्ञता और अनन्य भक्ति का जीवन जीने के लिए एक मर्मस्पर्शी मार्गदर्शिका प्राप्त होती है।



प्रह्लाद महाराज के दिव्य उपदेश

एक बाल संत की अपने सहपाठियों को दी गई ज्ञानभरी सीख, श्रील प्रभुपाद की व्याख्या के साथ।



इस पुस्तक में श्रील प्रभुपाद प्रह्लाद महाराज की कथा और शिक्षाएँ सुनाते हैं, जो एक घोर नास्तिक और अत्यंत शक्तिशाली परिवार में जन्मे पाँच वर्ष के बालक थे। यह वृत्तांत श्रीमद्भागवतम् के सातवें स्कंध से है, जहाँ शिक्षक के कक्षा से बाहर जाते ही प्रह्लाद अपने सहपाठियों को इकट्ठा करते हैं और उन्हें कृष्णभावनामृत अपनाने के लिए प्रेरित करते हैं। केवल बालक होते हुए भी प्रह्लाद गहरी बुद्धिमत्ता से बोलते हैं, क्योंकि उन्होंने अपने गुरु नारद मुनि से ज्ञान प्राप्त किया था। श्रील प्रभुपाद इन शिक्षाओं को अपने श्रोताओं के सामने प्रवचनों के रूप में प्रस्तुत करते हैं और हर बात को सरल भाषा में समझाते हैं।

आरंभिक अध्याय समझाते हैं कि मनुष्य जीवन छोटा होते हुए भी बहुत मूल्यवान है और इसे केवल इंद्रिय-भोग में नहीं गँवाना चाहिए। प्रह्लाद अपने मित्रों से कहते हैं कि आध्यात्मिक जीवन अभी, बचपन से ही आरंभ करें, क्योंकि दोबारा मनुष्य शरीर मिलने की कोई गारंटी नहीं है। श्रील प्रभुपाद प्रह्लाद के तीखे विश्लेषण को दोहराते हैं: बचपन, बुढ़ापा और प्रबल काम-वासना के वर्ष मिलकर जीवन का अधिकांश भाग नष्ट कर सकते हैं।

"पारिवारिक मोह" और उसके बाद वाले अध्याय में प्रह्लाद आसक्त गृहस्थ की तुलना उस रेशम के कीड़े से करते हैं जो अपने ही कोकून में फँस जाता है। वे अपने मित्रों को सलाह देते हैं कि केवल भौतिक सुख चाहने वालों का संग छोड़कर भक्तों का संग करें। श्रील प्रभुपाद जोड़ते हैं कि कृष्णभावनामृत आंदोलन से जुड़ने वाले युवा मूर्ख नहीं हैं, बल्कि सच में आनंदमय जीवन का अनुभव कर रहे हैं। वे अपने श्रोताओं और पाठकों को आमंत्रित करते हैं कि वे घर पर अवकाश के समय हरे कृष्ण का कीर्तन करें और उनकी पुस्तकें पढ़ें।

बाद के अध्याय समझाते हैं कि परम भगवान परमात्मा के रूप में सर्वत्र उपस्थित हैं, फिर भी वे एक व्यक्ति हैं, जैसे धूप सब ओर फैली रहती है जबकि सूर्य स्वयं एक स्थान पर रहता है। अंतिम अध्याय में प्रह्लाद निष्कर्ष देते हैं कि क्योंकि भगवान हर हृदय में हैं, इसलिए सभी जीवों पर दया करना हमारा कर्तव्य है। श्रील प्रभुपाद दिखाते हैं कि सबसे बड़ी दया केवल भोजन या वस्त्र देना नहीं, बल्कि दूसरों को कृष्णभावनामृत देना है, जैसा प्रह्लाद ने अपने सहपाठियों के लिए किया। पाठक एक बाल संत से भक्ति और करुणा की एक सरल किंतु शक्तिशाली सीख लेकर लौटते हैं।

भागवत का प्रकाश



भागवत का प्रकाश

वृन्दावन की वर्षा और शरद ऋतु, आध्यात्मिक जीवन की सीख के रूप में।

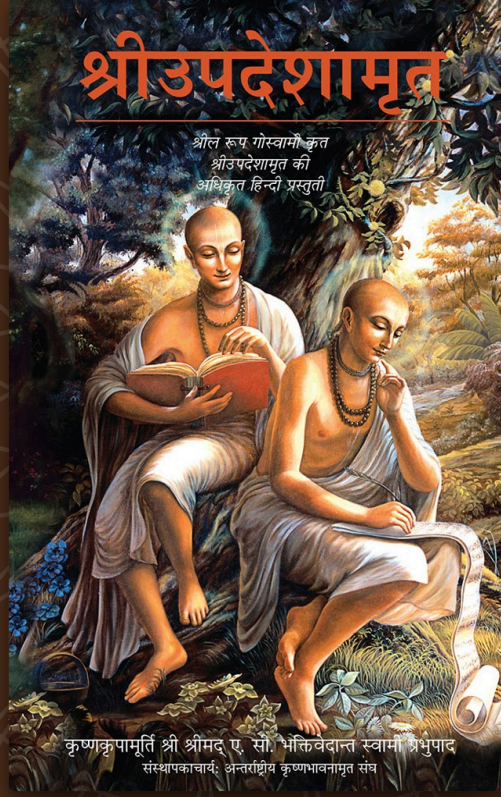


यह पुस्तक श्रील प्रभुपाद की सबसे अनोखी कृतियों में से एक है। जैसा कि प्रकाशक की प्रस्तावना बताती है, उन्होंने इसे 1961 में वृन्दावन में जापान में होने वाले एक विश्व सम्मेलन, “मानवीय आत्मा के संवर्धन हेतु सम्मेलन”, के लिए लिखा था। यह जानते हुए कि उनके पूर्वी देशों के श्रोता प्रकृति-वर्णन को बहुत पसन्द करते हैं, उन्होंने श्रीमद्भागवतम् का एक अध्याय चुना जिसमें भगवान् कृष्ण के प्राकट्य-स्थल वृन्दावन की ऋतुओं का वर्णन है। उन्होंने टीकाओं सहित अड़तालीस छोटे पाठ रचे और अनुरोध किया कि एक चित्रकार प्रत्येक दृश्य का चित्र बनाए, और बाद में मैडम ली युन शेंग के चित्रों के साथ यह पुस्तक पूर्ण हुई।

प्रत्येक पाठ प्रकृति के एक चित्र को एक आध्यात्मिक शिक्षा के साथ जोड़ता है। असीम आकाश के एक छोटे-से भाग को ढकने वाले बादल शुद्ध आत्मा को ढकने वाले अज्ञान के समान हैं, और वर्षा के बाद टरति मेंढक वैदिक मंत्रों का उच्चारण करते ब्रह्मचारियों के समान हैं। मूसलाधार वर्षा से भी अडिग पर्वत भगवान् के भक्तों की दृढ़ता दिखाते हैं, और घास से ढके रास्ते दिखाते हैं कि इस युग में शास्त्रों की कैसे उपेक्षा होती है। पुस्तक वर्षा ऋतु से होकर शरद ऋतु में प्रवेश करती है, जब मटमैला जल निर्मल हो जाता है, ठीक वैसे ही जैसे भक्ति से पतित आत्माएँ शुद्ध हो जाती हैं।

पुस्तक के केन्द्र में स्वयं भगवान् श्री कृष्ण हैं, जो श्री बलदेव, ग्वालबालों और गायों के साथ वृन्दावन के वनों में विचरण करते हैं। श्रील प्रभुपाद वर्णन करते हैं कि भगवान् कैसे गायों को नाम लेकर पुकारते हैं, मित्रों के साथ एक पत्थर की शिला पर सादा भोजन करते हैं, और वन उनका प्रेमपूर्वक स्वागत करता है। वे गोपियों की चर्चा करते हैं, जिनकी कृष्ण-विरह की भावनाओं को भगवान् चैतन्य द्वारा सिखाई गई आराधना की सर्वोच्च विधि के रूप में प्रस्तुत किया गया है। यदुओं के बीच कृष्ण की तुलना शरद ऋतु के निर्मल आकाश में तारों के बीच चन्द्रमा से की गई है।

बाद के पाठ व्यावहारिक और ब्रह्माण्डीय विषयों तक फैल जाते हैं। श्रील प्रभुपाद अच्छे राजधर्म और आधुनिक राजनीति, भगवान् को नया अन्न अर्पित करने के नवान्न उत्सव, और उन चातुर्मास्य महीनों की चर्चा करते हैं जब यात्रा रुक जाती है। वे कृष्णलोक और उसके दीप्तिमान तेज, उसके भीतर स्थित भौतिक ब्रह्माण्डों, और चन्द्रमा सहित स्वर्गलोकों के वर्णन के साथ समापन करते हैं। पाठक प्राकृतिक जगत् को एक निरन्तर शिक्षक के रूप में देखने लगते हैं, जो सदा कृष्ण की ओर संकेत करता है।



श्रीउपदेशामृत

प्रत्येक निष्ठावान भक्त के लिए श्रील रूप गोस्वामी के ग्यारह आवश्यक श्लोक।



यह पुस्तक वृन्दावन के छह गोस्वामियों के अग्रणी श्रील रूप गोस्वामी द्वारा लिखे गए ग्यारह श्लोकों, उपदेशामृत, का श्रील प्रभुपाद द्वारा किया गया अनुवाद और व्याख्या है। वृन्दावन के कृष्ण-बलराम मन्दिर में 1975 में लिखी अपनी प्रस्तावना में श्रील प्रभुपाद इन श्लोकों को नवीन भक्तों के लिए प्रथम उपदेश कहते हैं। जिस प्रकार भगवान् चैतन्य ने शिक्षाष्टक के आठ श्लोक दिए, उसी प्रकार रूप गोस्वामी ने यह छोटी कृति दी ताकि हम शुद्ध वैष्णव बन सकें। प्रत्येक श्लोक के बाद एक तात्पर्य है जो शास्त्रों और श्रील भक्तिसिद्धान्त सरस्वती ठाकुर की टीका पर आधारित है।

पुस्तक आत्म-संयम से आरम्भ होती है, जो आध्यात्मिक जीवन का पहला कर्तव्य है। जो धीर व्यक्ति वाणी, मन और क्रोध के वेगों को, तथा जीभ, पेट और जननेन्द्रियों के वेगों को सहन कर सकता है, उसे पूरे विश्व में शिष्य बनाने के योग्य कहा गया है। अगले श्लोक भक्ति को बिगाड़ने वाली छह बातें बताते हैं, जैसे अधिक खाना, व्यर्थ बोलना और लोभ, और उसे पोषित करने वाली छह बातें भी, जो उत्साह, निश्चय और धैर्य से आरम्भ होती हैं। पूरी पुस्तक में श्रील प्रभुपाद बल देते हैं कि भक्ति व्यावहारिक कर्म है, भावुकता नहीं।

कई श्लोक सिखाते हैं कि भक्तों को एक-दूसरे के साथ कैसा व्यवहार करना चाहिए। रूप गोस्वामी छह प्रेमपूर्ण आदान-प्रदानों की सूची देते हैं, जैसे उपहार देना और लेना, अपने मन की बात खोलकर कहना, और प्रसाद बाँटना। वे समझाते हैं कि कनिष्ठ, मध्यम और उत्तम वैष्णव का सम्मान कैसे करें, और चेतावनी देते हैं कि शुद्ध भक्त को कभी शारीरिक दोषों के आधार पर न परखें। अन्य श्लोक बताते हैं कि अज्ञान से पीड़ित लोगों को पवित्र नाम कड़वा लगता है, परन्तु जप करते रहने वालों को मीठा लगने लगता है, और कृष्ण के विषय में सुनने और स्मरण करने से मन को कैसे प्रशिक्षित करें।

अन्तिम श्लोक पवित्र स्थलों से होते हुए क्रमशः ऊपर उठते हैं, मथुरा से वृन्दावन और फिर गोवर्धन पर्वत तक। इन सबसे ऊपर श्री राधाकुण्ड है, श्रीमती राधारानी का सरोवर, जो कृष्ण को स्वयं राधा जितना ही प्रिय है। पुस्तक यह कहते हुए समाप्त होती है कि उस जल में एक बार स्नान करने से भी कृष्ण के प्रति शुद्ध प्रेम जाग्रत हो सकता है। पाठकों को दैनिक साधना के लिए एक संक्षिप्त पुस्तिका मिलती है, जो सर्वोच्च लक्ष्य की एक झलक भी दिखाती है।

भक्तिरसामृतसिन्धु

भक्तियोग का सम्पूर्ण विज्ञान



कृष्णकृपावर्ति

श्री श्रीमद् ए.सी. भक्तिवेदान्त स्वामी प्रभुपाद

संस्थापकाचार्य : अन्तर्राष्ट्रीय कृष्णभावनामृत संघ

भक्तिरसामृतसिन्धु

भक्ति का सम्पूर्ण विज्ञान, पहले कदमों से लेकर भावमय प्रेम तक।



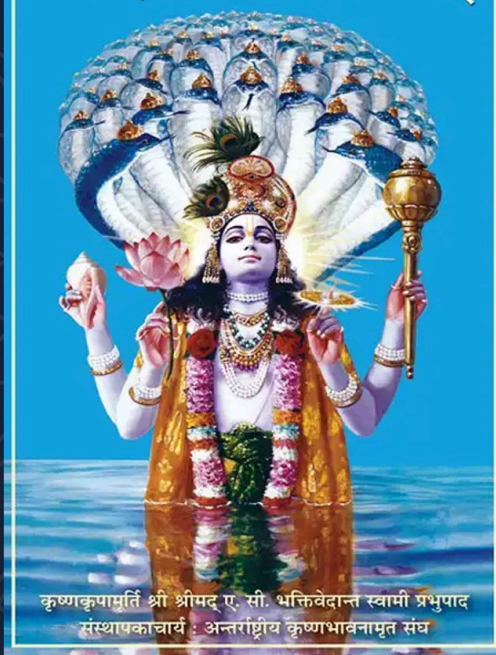
यह पुस्तक छह गोस्वामियों में प्रमुख श्रील रूप गोस्वामी के महान् संस्कृत ग्रन्थ भक्तिरसामृतसिन्धु का श्रील प्रभुपाद द्वारा प्रस्तुत सारांश-अध्ययन है। प्रस्तावना बताती है कि रूप गोस्वामी ने बंगाल में मंत्री का पद छोड़ दिया और प्रयाग में दस दिनों तक भगवान् चैतन्य से शिक्षा प्राप्त की। श्रील प्रभुपाद ने 1970 में लॉस एंजेलिस में प्रस्तावना पर हस्ताक्षर किए और यह पुस्तक विशेष रूप से कृष्णभावनामृत आन्दोलन के लोगों के लिए प्रस्तुत की। इसका केन्द्रीय संदेश सरल है: हर किसी में प्रेम करने की प्रवृत्ति होती है, और वह प्रेम तभी पूरी तरह तृप्त होता है जब वह कृष्ण पर टिकता है।

पहला भाग शुद्ध भक्ति को कृष्ण की अनुकूल सेवा के रूप में परिभाषित करता है, जो भौतिक इच्छा, मानसिक चिन्तन और सकाम कर्म से मुक्त हो। यह समझाता है कि शुद्ध भक्त पाँच प्रकार की मुक्ति भी नहीं चाहते, और भक्ति प्रामाणिक गुरु के मार्गदर्शन में किया जाने वाला सक्रिय अनुशीलन है। फिर श्रील प्रभुपाद साधना को विस्तार से प्रस्तुत करते हैं: भक्ति के चौंसठ अंग, विग्रह-सेवा में बचने योग्य अपराध, और श्रवण तथा स्मरण की विधियाँ। पाँच शक्तिशाली कार्य विशेष रूप से उभरकर आते हैं, अर्थात् मथुरा में निवास, विग्रह की आराधना, श्रीमद्भागवतम् का पाठ, भक्त की सेवा, और हरे कृष्ण मंत्र का कीर्तन।

विधिपूर्वक साधना से पुस्तक स्वतःस्फूर्त भक्ति और भावमय प्रेम की ओर बढ़ती है। लम्बे अध्याय श्री कृष्ण के चौंसठ दिव्य गुणों, उनके भक्तों, और उन अनेक लक्षणों का वर्णन करते हैं जिनसे भावमय प्रेम शरीर और मन में प्रकट होता है। प्रत्येक बात को श्रीमद्भागवतम् के श्लोकों और कथाओं तथा वृन्दावन और द्वारका की लीलाओं से स्पष्ट किया गया है। पाठक देखने लगता है कि कृष्ण-प्रेम का अध्ययन एक वास्तविक विज्ञान के रूप में कैसे किया जा सकता है।

बाद के अध्याय कृष्ण के साथ पाँच प्रत्यक्ष सम्बन्धों को समझाते हैं: शान्त, दास्य, सख्य, वात्सल्य और माधुर्य। इसके बाद सात अप्रत्यक्ष भाव आते हैं, जिनमें हास्य, विस्मय, वीरता, करुणा, क्रोध, भय और वीभत्स सम्मिलित हैं, साथ ही इस बात का विश्लेषण कि ये रस कब ठीक से मिलते हैं और कब नहीं। पुस्तक रूप गोस्वामी की इस विनम्र आशा के साथ समाप्त होती है कि भगवान् कृष्ण उनकी प्रस्तुति से प्रसन्न होंगे। पाठकों को दैनिक सेवा के लिए एक व्यावहारिक मार्गदर्शिका और उस लक्ष्य का मानचित्र, दोनों मिलते हैं जिसकी ओर यह सेवा ले जाती है।

श्रीईशोपनिषद्



कृष्णकृष्णमूर्ति श्री श्रीमद् ए. सी. भक्तिवेदान्त स्वामी प्रभुपाद
संस्थापकाचार्य : अन्तर्राष्ट्रीय कृष्णभावनामृत संघ

श्रीईशोपनिषद्

अठारह वैदिक मंत्र, जो परम भगवान् को सब कुछ के स्वामी के रूप में प्रकट करते हैं।



यह पुस्तक यजुर्वेद के इस उपनिषद् के अठारह मंत्रों को मंगलाचरण और श्रील प्रभुपाद के तात्पर्यों के साथ प्रस्तुत करती है। इसका आरम्भ 6 अक्टूबर 1969 को लन्दन के कॉनवे हॉल में दिए गए उनके एक प्रवचन से होता है, जिसका शीर्षक था “वेदों की शिक्षाएँ”। उसमें वे समझाते हैं कि बद्ध जीवों में चार दोष होते हैं, इसलिए वास्तविक ज्ञान गुरु-परम्परा में प्रामाणिक स्रोत से सुनकर ही प्राप्त होना चाहिए। वे कहते हैं कि वैदिक ज्ञान स्वयं भगवान् कृष्ण से आता है और ब्रह्मा से नारद तक और फिर आगे पहुँचाया गया।

मंगलाचरण परम भगवान् को पूर्ण के रूप में वर्णित करता है, जिनसे पूर्ण वस्तुएँ उत्पन्न होती हैं, फिर भी वे स्वयं पूर्ण बने रहते हैं। प्रसिद्ध प्रथम मंत्र सिखाता है कि ब्रह्माण्ड में सब कुछ भगवान् के स्वामित्व और नियंत्रण में है, और हमें केवल अपने लिए निर्धारित भाग ही स्वीकार करना चाहिए। इससे श्रील प्रभुपाद लोभ, सम्पत्ति के झगड़ों, और प्रकृति के नियमों को न तोड़ने के मानवीय दायित्व के विषय में व्यावहारिक शिक्षाएँ निकालते हैं। आगे के मंत्र समझाते हैं कि मनुष्य कर्म-बन्धन में बँधे बिना जीवनभर कैसे कर्म कर सकता है।

बीच के मंत्र वास्तविक ज्ञान की तुलना अविद्या से करते हैं और चेतावनी देते हैं कि भटकी हुई शिक्षा अज्ञान से भी अधिक खतरनाक हो सकती है। श्रील प्रभुपाद बताते हैं कि भगवद्गीता के अनुसार ज्ञान का अनुशीलन कैसे करें, और हिरण्यकशिपु की कथा सुनाते हैं, जिसने भौतिक शक्ति से मृत्यु को जीतने का प्रयास किया और असफल रहा। वे प्रामाणिक आचार्यों से सुनने पर बल देते हैं और इस विचार को अस्वीकार करते हैं कि सभी मार्ग एक ही लक्ष्य तक ले जाते हैं। ये मंत्र यह भी प्रकट करते हैं कि चकाचौंध करने वाली ब्रह्मज्योति भगवान् के साकार मुख को ढक लेती है, जिसके दर्शन के लिए भक्त प्रार्थना करता है।

अन्तिम मंत्र मृत्यु के क्षण की ओर मुड़ते हैं और हमें याद दिलाते हैं कि शरीर एक अस्थायी वस्त्र है, जबकि आत्मा अपनी शाश्वत पहचान बनाए रखती है। पुस्तक अठारहवें मंत्र की प्रार्थना के साथ समाप्त होती है, जिसमें भगवान् को अग्नि के समान शक्तिशाली कहकर सम्बोधित किया गया है और उनसे विनती की गई है कि वे आत्मा को उनकी ओर लौटने के सही मार्ग पर ले चलें। पूरी पुस्तक में श्रील प्रभुपाद दिखाते हैं कि यह छोटा-सा उपनिषद् किस प्रकार पुरुषोत्तम भगवान् कृष्ण की ओर संकेत करता है। पाठकों को वैदिक दर्शन और मानव जीवन के लिए उसके व्यावहारिक अर्थ का एक संक्षिप्त, स्पष्ट परिचय मिलता है।

श्री ब्रह्म-संहिता



श्रील भक्तिसिद्धान्त सरस्वती
ठाकुर गोस्वामी महाराज

श्री ब्रह्म-संहिता

आदि भगवान् गोविन्द और उनके धाम की महिमा गाते ब्रह्माजी के स्तोत्र।

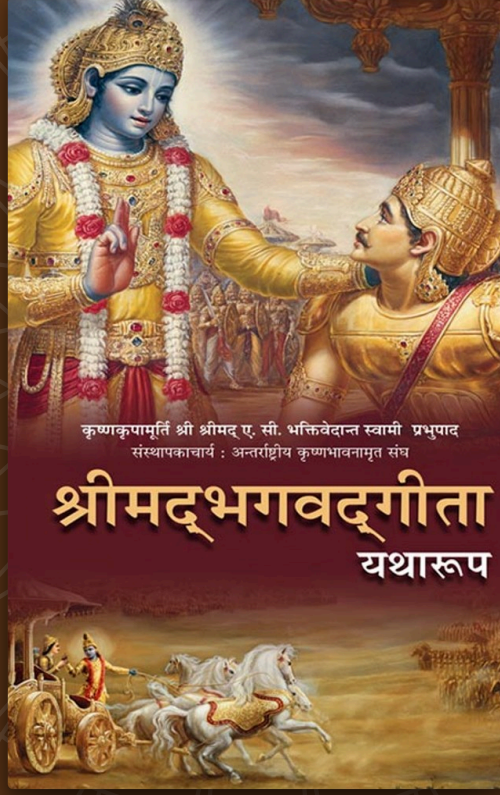


इस पुस्तक में आदि भगवान् गोविन्द, अर्थात् कृष्ण, की महिमा में ब्रह्माजी के स्तोत्र हैं। प्राक्कथन के अनुसार यह सौ अध्यायों वाले एक ग्रन्थ का पाँचवाँ अध्याय है, जिसे भगवान् श्री चैतन्य ने दक्षिण भारत के आदि-केशव मन्दिर में प्राप्त किया था। प्राक्कथन पर 1932 में कलकत्ता के श्री गौड़ीय मठ में सिद्धान्त सरस्वती के हस्ताक्षर हैं। यह बताता है कि व्याख्याएँ ठाकुर भक्तिविनोद के बंगाली तात्पर्य का अनुसरण करती हैं, जिसे अंग्रेज़ी में प्रस्तुत किया गया है, और उनका मूल श्रील जीव गोस्वामी के लेखन में है।

पुस्तक इस प्रसिद्ध घोषणा से आरम्भ होती है कि गोविन्द नाम से जाने जाने वाले कृष्ण परम भगवान् हैं, जिनका शरीर नित्य, आनन्दमय और आध्यात्मिक है, और वे सभी कारणों के कारण हैं। फिर यह उनके धाम, गोकुल या गोलोक, का वर्णन सहस्र दलों वाले कमल के रूप में करती है, जिसके मध्य भाग में कृष्ण निवास करते हैं और जिसकी पंखुड़ियों पर गोपियाँ रहती हैं। इसके चारों ओर श्वेतद्वीप और आध्यात्मिक आकाश हैं, और विरजा नदी के पार भौतिक शक्ति स्थित है। ग्रन्थ समझाता है कि भगवान् के विस्तार किस प्रकार सृष्टि करते हैं, जबकि भगवान् मोहिनी शक्ति से अछूते रहते हैं।

इसके बाद स्वयं ब्रह्मा के ज्ञानोदय की कथा आती है। कृष्ण की बाँसुरी की ध्वनि सुनकर वे गायत्री प्राप्त करते हैं, गोलोक में भगवान् का ध्यान करते हैं, और सत्य के सागर से परिचित होते हैं। फिर वे अपनी प्रसिद्ध स्तुतियाँ अर्पित करते हैं, जिनमें से प्रत्येक इन शब्दों पर समाप्त होती है: मैं आदि पुरुष भगवान् गोविन्द का भजन करता हूँ। ये स्तोत्र चिन्तामणियों और कामधेनु गायों की आध्यात्मिक भूमि, कृष्ण के सौन्दर्य और बाँसुरी, और इस बात का वर्णन करते हैं कि विष्णु, शिव, दुर्गा, गणेश और सूर्य सभी उन्हीं की शक्ति से कार्य करते हैं।

पुस्तक के अन्त में इन स्तोत्रों से प्रसन्न होकर कृष्ण पाँच श्लोकों में ब्रह्मा को वास्तविक ज्ञान और भक्ति की शिक्षा देते हैं। टीका समझाती है कि वास्तविक ज्ञान परम सत्य के साथ अपने सम्बन्ध का ज्ञान है, और कर्म जब भगवान् को अर्पित किया जाता है तब भक्ति बन जाता है। यह विभिन्न कल्पनाप्रधान दर्शनों का भी सर्वेक्षण करती है और दिखाती है कि वे प्रेममयी सेवा से कहाँ पीछे रह जाते हैं। पाठकों को कृष्ण की सर्वोच्चता और उनके नित्य धाम का एक समृद्ध, काव्यात्मक दर्शन प्राप्त होता है।



कृष्णकृपामूर्ति श्री श्रीमद् ए. सी. भक्तिवेदान्त स्वामी प्रभुपाद
संस्थापकाचार्य : अन्तर्राष्ट्रीय कृष्णभावनामृत संघ

श्रीमद्भगवद्गीता यथारूप

श्रीमद्भगवद्गीता यथारूप

कुरुक्षेत्र के युद्धक्षेत्र में अर्जुन को दिया गया भगवान् श्रीकृष्ण का शाश्वत उपदेश।

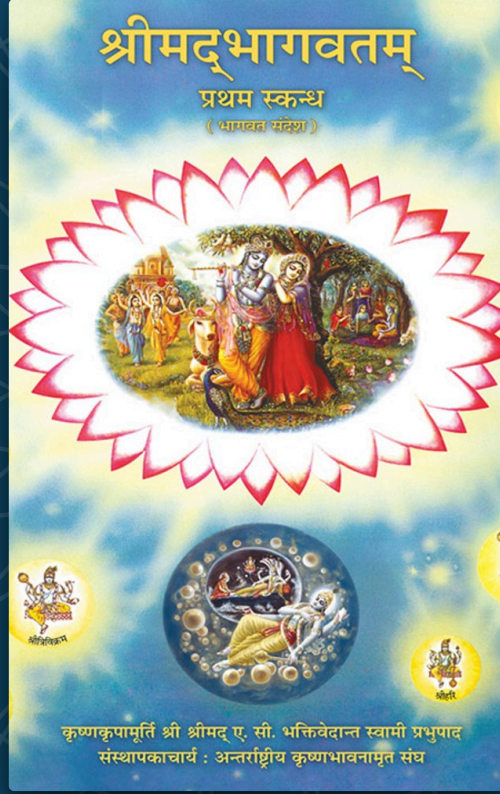


श्रीमद्भगवद्गीता यथारूप भगवान् श्रीकृष्ण और उनके मित्र एवं भक्त अर्जुन के बीच हुआ संवाद प्रस्तुत करती है, जो एक महान युद्ध से ठीक पहले कुरुक्षेत्र के युद्धक्षेत्र में हुआ था। यह संवाद महाभारत का अंग है, और इसे संजय अंधे राजा धृतराष्ट्र को सुनाते हैं, जिनके पुत्र अपने चचेरे भाइयों, पाण्डवों से युद्ध करने वाले हैं। जब दोनों सेनाएँ आमने-सामने खड़ी होती हैं, तो अपने ही सम्बन्धियों और गुरुजनों से लड़ने के विचार से अर्जुन शोक से भर जाते हैं और अपना धनुष रख देते हैं। तब उनके सारथी बने श्रीकृष्ण उन्हें उपदेश देना आरम्भ करते हैं।

इस ग्रन्थ में अठारह अध्याय हैं, और प्रत्येक श्लोक के बाद श्रील प्रभुपाद का तात्पर्य, अर्थात् व्याख्या, दी गई है। अपनी भूमिका में श्रील प्रभुपाद बताते हैं कि गीता पाँच मूल सत्त्यों का वर्णन करती है: परमेश्वर, जीव, प्रकृति, काल और कर्म। आरम्भिक अध्याय बताते हैं कि आत्मा शाश्वत है और शरीर से भिन्न है, तथा स्वार्थ-रहित होकर भगवान् को अर्पित किया गया कर्म मनुष्य को बन्धन से मुक्त करता है। आगे के अध्याय दिव्य ज्ञान, ध्यान, प्रकृति के तीन गुणों और भगवान् के अनेक ऐश्वर्यों का वर्णन करते हैं।

ग्यारहवें अध्याय में श्रीकृष्ण अर्जुन को अपना विश्वरूप दिखाते हैं, और बारहवें अध्याय में वे भक्ति को सर्वश्रेष्ठ मार्ग बताते हैं। यह उपदेश निष्काम कर्म, ज्ञान और ध्यान से होते हुए क्रमशः भक्ति तक पहुँचता है, जो परम पुरुष की प्रेममयी सेवा है। अन्तिम अध्याय में श्रीकृष्ण अपना सबसे गोपनीय उपदेश देते हैं: सदा उनका चिन्तन करो, उनके भक्त बनो, और निर्भय होकर उनकी शरण ग्रहण करो। अर्जुन घोषणा करते हैं कि उनका मोह नष्ट हो गया है और वे श्रीकृष्ण की इच्छा के अनुसार कर्म करने के लिए तैयार हैं।

श्रील प्रभुपाद गीता का अर्थ बिना तोड़े-मरोड़े प्रस्तुत करते हैं और दिखाते हैं कि श्रीकृष्ण स्वयं ही इसके वक्ता भी हैं और लक्ष्य भी। श्रीकृष्ण बताते हैं कि उन्होंने यह विज्ञान सबसे पहले सूर्यदेव विवस्वान् को सुनाया था, और यह गुरुओं की परम्परा से चला आ रहा है। नए पाठक के लिए यह ग्रन्थ स्पष्ट उत्तर देता है कि हम कौन हैं, यह संसार क्या है, और उद्देश्यपूर्ण जीवन कैसे जिया जाए। इसका सार यह है कि कोई भी व्यक्ति, किसी भी परिस्थिति में, भक्ति के साथ श्रीकृष्ण की ओर मुड़कर सच्ची शान्ति पा सकता है।



श्रीमद्भागवतम्

वैदिक ज्ञान का पका हुआ फल, जिसके केन्द्र में भगवान् श्रीकृष्ण और उनके भक्त हैं।



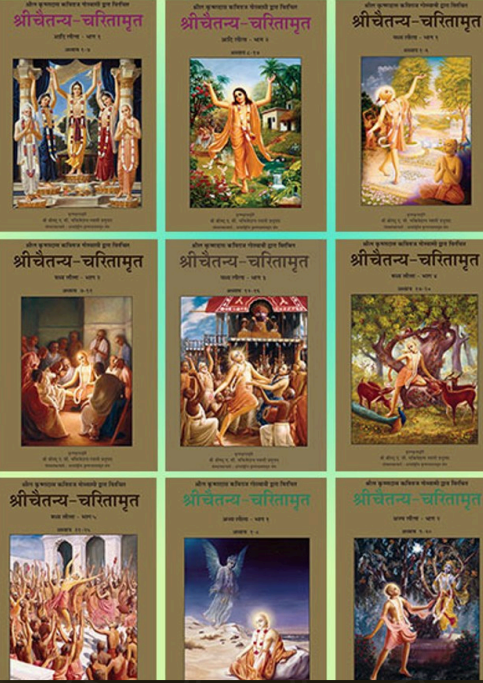
व्यासदेव द्वारा संकलित श्रीमद्भागवतम् बारह स्कन्धों का एक विशाल ग्रन्थ है, जो स्वयं को वैदिक साहित्य रूपी कल्पवृक्ष का पका हुआ फल कहता है। इसका आरम्भ नैमिषारण्य के वन में होता है, जहाँ शौनक के नेतृत्व में ऋषिगण सूत गोस्वामी से पूछते हैं कि कलियुग के कष्टमय समय में लोगों का सच्चा कल्याण किसमें है। सूत उत्तर में वह सब सुनाते हैं जो उन्होंने तब सुना था जब व्यासदेव के पुत्र शुकदेव गोस्वामी ने महाराज परीक्षित को भागवत सुनाया था। सात दिन में मृत्यु का शाप पाए हुए राजा अन्न-जल त्यागकर गंगा के तट पर बैठे थे और उन्होंने पूछा कि मृत्यु निकट होने पर मनुष्य को क्या करना चाहिए।

पहले नौ स्कन्ध क्रमशः भगवान् के अवतारों, ब्रह्माण्ड की सृष्टि और महान भक्तों के जीवन का वर्णन करते हैं। पाठक यहाँ विदुर और मैत्रेय, अपनी माता देवहूति को उपदेश देते भगवान् कपिल, बालक ध्रुव, राजा पृथु, संत जड़ भरत, अजामिल, और भगवान् नृसिंहदेव द्वारा रक्षित प्रह्लाद महाराज से मिलते हैं। आगे के स्कन्धों में गजेन्द्र के उद्धार, समुद्र-मन्थन, भगवान् वामन और बलि महाराज, भगवान् रामचन्द्र, और महान राजवंशों की कथाएँ हैं।

ग्रन्थ का हृदय, दसवाँ स्कन्ध, भगवान् श्रीकृष्ण के अपने जीवन का वर्णन करता है: देवकी और वसुदेव के यहाँ उनका जन्म, वृन्दावन में माता यशोदा और नन्द महाराज के साथ उनका बचपन, उनका गोवर्धन पर्वत उठाना, और गोपियों के साथ रास-नृत्य। आगे मथुरा और द्वारका में उनका जीवन, रुक्मिणी से उनका विवाह, और अपने निर्धन ब्राह्मण मित्र सुदामा पर उनकी कृपा का वर्णन है। ग्यारहवें स्कन्ध में श्रीकृष्ण इस संसार से प्रस्थान करने से पहले उद्धव को अपना अन्तिम उपदेश देते हैं। बारहवाँ स्कन्ध कलियुग का वर्णन करता है और उसका उपाय बताता है: केवल हरे कृष्ण महामन्त्र का कीर्तन।

भागवत अपने अन्त में अपनी गुरु-परम्परा बताता है, भगवान् से ब्रह्मा, नारद मुनि, व्यासदेव, शुकदेव और परीक्षित तक, और स्वयं को समस्त वेदान्त दर्शन का सार कहता है। अपनी प्रस्तावना में श्रील प्रभुपाद सलाह देते हैं कि इसे बिना आगे कूदे क्रमशः पढ़ना चाहिए, क्योंकि दसवाँ स्कन्ध पहले नौ स्कन्धों के बाद ही ठीक से समझ में आता है। पूरे ग्रन्थ में यही शिक्षा है कि परमेश्वर की शुद्ध भक्ति ही जीवन का सर्वोच्च लक्ष्य है। पाठक यह गहरी समझ लेकर लौटते हैं कि भगवान् कौन हैं और हर प्रकार के सच्चे जीवों ने उन तक पहुँचने का मार्ग कैसे पाया।

श्रीचैतन्य-चरितामृत ९ खंड



श्रीचैतन्य-चरितामृत

श्री चैतन्य महाप्रभु का जीवन, उनकी शिक्षाएँ और उनका भावमय प्रेम।

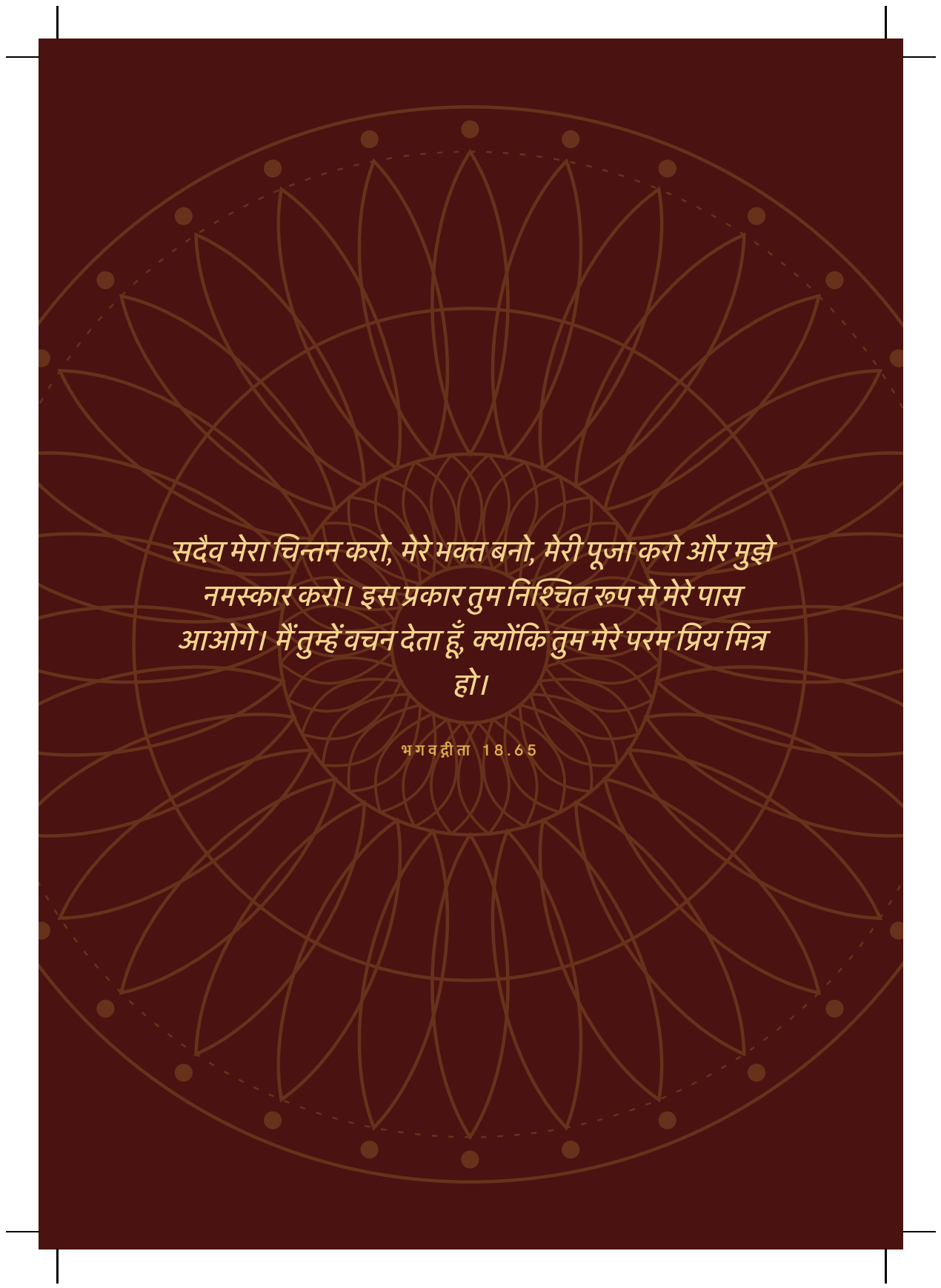


कृष्णदास कविराज गोस्वामी द्वारा रचित श्री चैतन्य-चरितामृत श्री चैतन्य महाप्रभु के जीवन और शिक्षाओं पर प्रमुख ग्रन्थ है, जिन्होंने लगभग पाँच सौ वर्ष पहले भारत में एक महान आध्यात्मिक आन्दोलन आरम्भ किया। लेखक उन्हें स्वयं श्रीकृष्ण के रूप में प्रस्तुत करते हैं, जो श्रीमती राधारानी का भाव लेकर कलियुग में प्रकट हुए ताकि कृष्ण के प्रति उनके प्रेम का आस्वादन कर सकें। वे संकीर्तन, अर्थात् हरे कृष्ण महामन्त्र के सामूहिक कीर्तन, के द्वारा सबको भगवान् का शुद्ध प्रेम देने आए थे। कृष्णदास कविराज ने यह ग्रन्थ वृद्धावस्था में वृन्दावन में लिखा और 1615 में पूरा किया, और इसके लिए उन्होंने मुरारि गुप्त तथा स्वरूप दामोदर गोस्वामी की दैनन्दिनियों का सहारा लिया।

यह ग्रन्थ तीन भागों में है, जिन्हें लीला कहा जाता है। आदि-लीला बारह अध्यायों से आरम्भ होती है, जो बताते हैं कि चैतन्य महाप्रभु कौन हैं और नित्यानन्द प्रभु तथा अद्वैत आचार्य जैसे उनके पार्श्वों का परिचय देते हैं, और फिर नवद्वीप में उनके बचपन और यौवन की कथा कहती है। वहाँ वे चौबीस वर्ष गृहस्थ के रूप में रहे और फिर उन्होंने संन्यास, अर्थात् जीवन का त्यागमय आश्रम, स्वीकार किया। मध्य-लीला उनकी छह वर्षों की यात्राओं का वर्णन करती है, जिनमें दक्षिण भारत की यात्रा और वृन्दावन की यात्रा भी शामिल हैं।

इस यात्रा में महाप्रभु महान विद्वान् सार्वभौम भट्टाचार्य का हृदय जीत लेते हैं, रामानन्द राय के साथ भगवत्प्रेम के सर्वोच्च सत्त्यों पर चर्चा करते हैं, और जगन्नाथ पुरी में रथयात्रा उत्सव में भावविभोर होकर नृत्य करते हैं। वे रूप गोस्वामी और सनातन गोस्वामी को भक्ति की शिक्षा देते हैं, और वाराणसी के सभी निवासी वैष्णव बन जाते हैं। अन्त्य-लीला जगन्नाथ पुरी में उनके अन्तिम अठारह वर्षों का वर्णन करती है, जहाँ स्वरूप दामोदर, हरिदास ठाकुर और रघुनाथ दास गोस्वामी जैसे भक्त उनके साथ थे। वहाँ वे कृष्ण-विरह की भावनाओं में अधिकाधिक डूबते जाते हैं, और ग्रन्थ उनके उपदेश के आठ श्लोकों, शिक्षाष्टक, के साथ समाप्त होता है।

श्रील प्रभुपाद का अनुवाद और तात्पर्य श्रील भक्तिसिद्धान्त सरस्वती गोस्वामी और श्रील भक्तिविनोद ठाकुर की बंगाली टीकाओं पर आधारित है। यह ग्रन्थ गहन दर्शन को भगवान् के अपने भक्तों के प्रति प्रेम और भक्तों के उनके प्रति प्रेम की मार्मिक कथाओं के साथ जोड़ता है। पाठक सीखते हैं कि इस युग के लिए पवित्र नाम का कीर्तन ही सरल मार्ग है और कृष्ण-प्रेम ही जीवन का परम लक्ष्य है। लेखक अन्त में कहते हैं कि जो कोई श्रद्धा और प्रेम से इस ग्रन्थ का आस्वादन करता है, उसे यह समस्त सौभाग्य प्रदान करता है।



सदैव मेरा चिन्तन करो, मेरे भक्त बनो, मेरी पूजा करो और मुझे
नमस्कार करो। इस प्रकार तुम निश्चित रूप से मेरे पास
आओगे। मैं तुम्हें वचन देता हूँ, क्योंकि तुम मेरे परम प्रिय मित्र
हो।

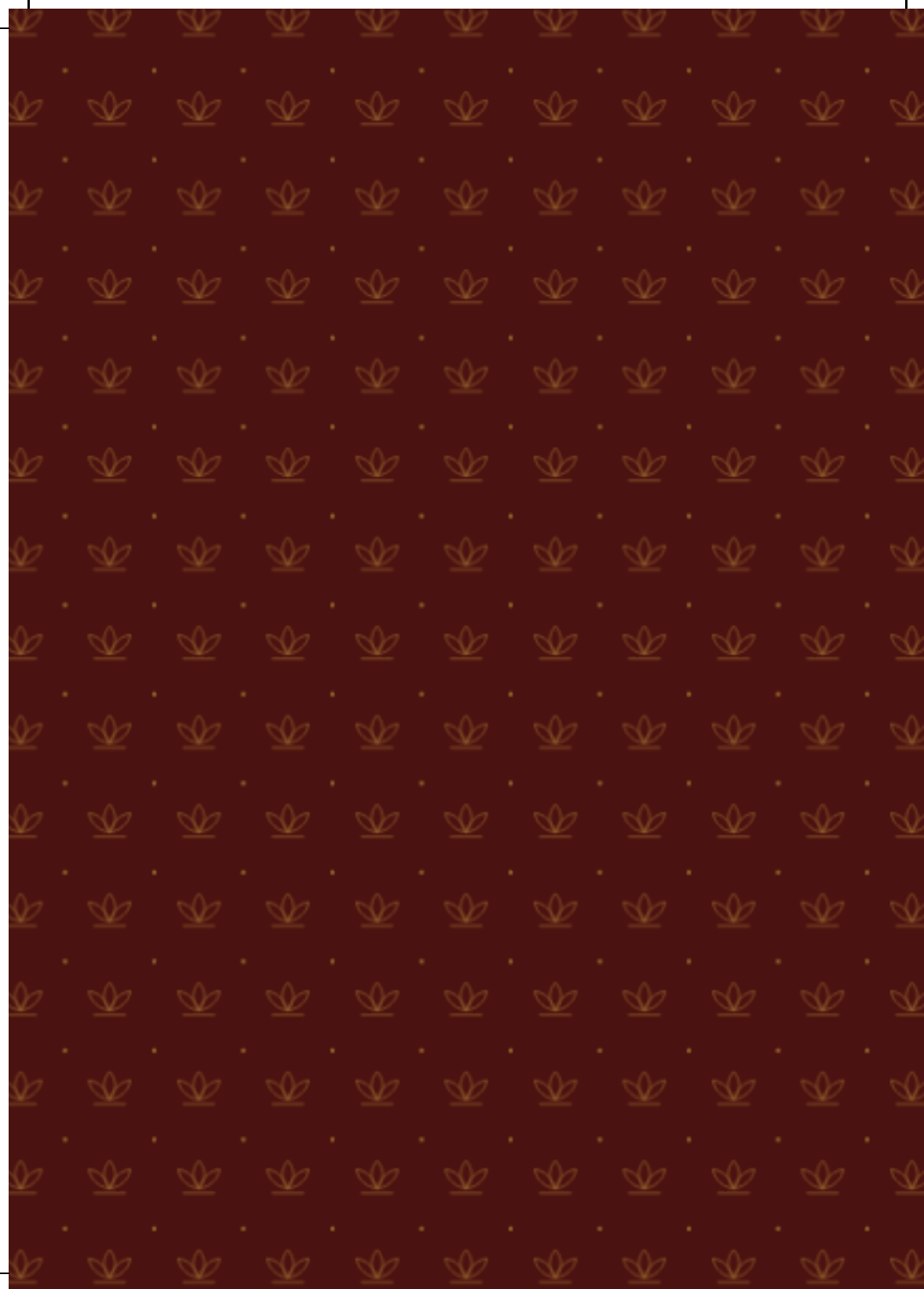
भगवद्गीता 18.65

टिप्पणियाँ

इस ब्रोशर के विषय में

आकार	A5 पोर्ट्रेट — 148 × 210 मि.मी. (कटिंग के बाद)
पृष्ठ	76 पृष्ठ, सेल्फ़-कवर
रंग	पूर्ण रंगीन (4/4), दोनों ओर
बाइंडिंग	सैडल-स्टिच (रीढ़ पर दो स्टेपल)
ब्लीड	प्रिंट-रेडी फ़ाइल में हर किनारे पर 3 मि.मी., क्रॉप मार्क्स सहित

प्रिंटर के लिए: A5 पर 100% (“Actual size”) पर छापें — “fit to page” न करें। प्रिंट-रेडी फ़ाइल **Timeless-Books-A5-Hindi-print-ready.pdf** का उपयोग करें, जिसके पृष्ठ 168 × 230 मि.मी. के हैं और उनमें क्रॉप मार्क्स हैं। सभी सार हमारे अपने शब्दों में हैं, जो प्रत्येक पुस्तक को पढ़कर लिखे गए हैं।
अधिक जानकारी: spbb.pages.dev





हरे कृष्ण हरे कृष्ण
कृष्ण कृष्ण हरे हरे
हरे राम हरे राम
राम राम हरे हरे

जप कीजिए और सुखी रहिए।